जिनभाषित

वीर निर्वाण सं. 2528

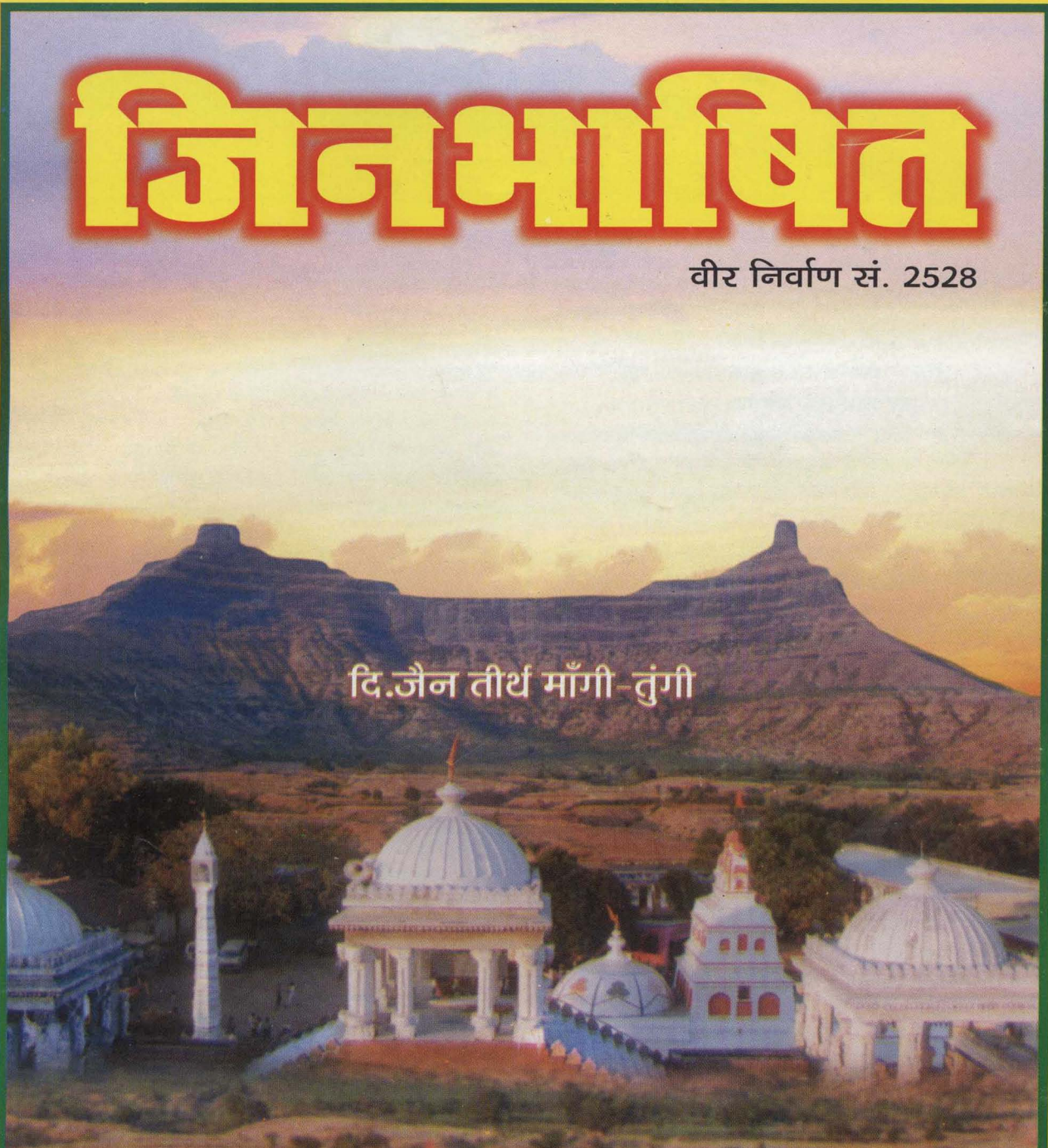

* तीर्थ संरक्षण में अपूर्व अवदान
* अनदेखा सच

श्रावण, वि. सं. 2059 अगस्त 2002

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

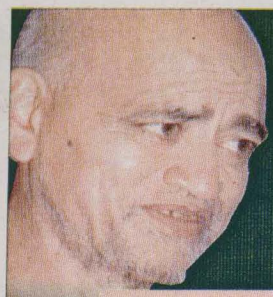

सम्यग्दर्शन

आचार्य श्री विद्यासागर जी

समन्तभद्राचार्य का रत्नकरण्डश्रावकाचार, श्रावकाचार का प्राचीनतम सूत्र ग्रन्थ है। उसमें सम्यग्दर्शन का लक्षण बताया गया है-

श्रद्धानं परमार्थानामाप्तागमतपोभृताम्।
त्रिमूढापोढमष्टाङ्गं सम्यग्दर्शनमस्मयम्॥

इसका अर्थ होता है परमार्थ मोक्षमार्ग में सहायीभूत आप्त, आगम और तपोभृत् (निर्ग्रन्थ गुरु) का तीन मूढ़ताओं से रहित, आठ अंगों से सहित, और आठ प्रकार के मद से रहित श्रद्धान करना सम्यग्दर्शन है।

जिस प्रकार सघन वन के बीच रात्रि के निविड अन्धकार में मार्गभ्रष्ट मनुष्य सूर्योदय के होने पर इष्ट मार्ग को प्राप्त कर प्रसन्नता का अनुभव करता है, उसी प्रकार इस चतुर्गतिरूप संसार वन में मिथ्यात्व के सघन अन्धकार के कारण पथभ्रष्ट हुआ जो भव्यप्राणी अनादिकाल से छटपटा रहा था, वह अरहंत परमेष्ठी के द्वारा प्रतिपादित आगम और संसार की माया ममता से परे रहने वाले निर्ग्रन्थ गुरु की शरण पाकर प्रफुल्ल हो उठता है।

अनादिकाल से जीव रागी-द्वेषी देव, रागद्वेष को बढ़ाने वाले शास्त्र और पंचेन्द्रिय विषयों में लीन गुरुओं को प्राप्त कर संसार में परिभ्रमण कर रहा है। इस परिभ्रमण से बचना चाहते हो तो आप्त, आगम और सद्गुरु की शरण को प्राप्त होओ। सम्यग्दर्शन आत्मा की वस्तु है, आत्मा का गुण है और आत्मा को छोड़ अन्यत्र उसकी उपलब्धि नहीं होती। वह बाजार से नहीं खरीदा जा सकता। वह आत्मानुभूति से होता है, आत्मज्ञान से नहीं। जिस प्रकार संसार के अन्य पदार्थों का ज्ञान होता है उसी प्रकार आत्मा का स्वरूप भी शास्त्र के अनुसार माना जा सकता है। परन्तु जिस प्रकार आत्मा का स्वरूप मैंने जाना है वह मैं ही हूँ इस प्रकार की अनुभूति सबको नहीं होती। जिसे होने लगती है वह सम्यग्दृष्टि कहलाने लगता है।

सम्यग्दर्शन होने पर इस जीव को सांसारिक कार्यों से स्वयं अरुचि होने लगती है और धार्मिक कार्यों के प्रति रुचि प्रकट होने लगती है। जिस प्रकार पित्त ज्वर के निकल जाने पर मिश्री मीठी लगने लगती है, उसी प्रकार मिथ्यात्व का विकार निकल जाने पर धार्मिक कार्य अच्छे लगने लगते हैं। सम्यग्दर्शन, देव शास्त्र गुरु के प्रति अटूट विश्वास को प्रकट करता है। हर एक विषय में ऐसा क्यों? वैसा क्यों? इस प्रकार के तर्क से काम नहीं चलता। आखिर किसी स्थान पर अविचलित विश्वास करना ही पड़ता है। जब तक ऐसा विश्वास नहीं होता, तब तक काम बनता नहीं है।

नारियल, जिसे श्रीफल कहते हैं, वह भेद-विज्ञान की शिक्षा प्राप्त करने का उत्तम दृष्टान्त है। जिस प्रकार श्रीफल का गोला अलग है और उसके ऊपर का कठोर आवरण अलग है, उसी प्रकार आत्मा अलग है और उस पर लगा हुआ शरीर अलग है। जिस प्रकार गोले के ऊपर लगी हुई लाल, काली परत अलग है और शुभ्रवर्ण गोला अलग है, उसी प्रकार आत्मा अलग है और उसके साथ लगा हुआ रागादिक भावकर्म अलग है। यद्यपि रागादिक भावकर्म आत्मा की ही परिणाति है तथापि वह संयोगज भाव होने के कारण आत्मा का निज का भाव नहीं कहा जा सकता।

अनीन्द्रिय पदार्थ का निर्णय करने के लिये आज आगम और निर्ग्रन्थ गुरु का आलम्बन लेना पड़ता है। मनुष्य के चर्म चक्षुओं की कितनी सामर्थ्य है? वह सामने स्थिति पदार्थ को भी पूर्णतया जानने में जब समर्थ नहीं है, तब पृष्ठवर्ती पदार्थों को जानना तो और भी कठिन है। वीतरागप्रणीत और निःस्पृह गुरुओं के द्वारा रचित ग्रन्थ ही इस काल में इस जीव के शरणभूत हैं। यदि आगम और निर्ग्रन्थ गुरु न हों तो पथप्रदर्शन कराने वाला फिर कौन है? इस समय देव की अनुपलब्धि है, परन्तु आगम और निर्गन्थ गुरु विद्यमान हैं। पंचमकाल के अन्त तक निर्ग्रन्थ गुरु रहेंगे और वे हमारा मार्गदर्शन करते रहेंगे। इन आगम और गुरुओं का भी अभाव हो जाता है, तो दुनिया में प्रलय मच जाता है। ये आगम और गुरु ही जीवों को आप्त की श्रद्धा कराते हैं, उनका मार्ग दिखलाते हैं।

गुरु गोविन्द दोनों खड़े काके लागूँ पाय?
बलिहारी गुरु आपकी गोविन्द दियो बताय॥

जिस प्रकार गोविन्द का ज्ञान गुरु से ही होता है उसी प्रकार अरहंत देव का ज्ञान इन गुरुओं के द्वारा ही होता है। जिस दिन गुरुओं की उपेक्षा करोगे, उस दिन यथार्थ ज्ञान से भ्रष्ट हो जाओगे।

इमली के पेड़ पर बैठा कबूतर जिस प्रकार अपने लक्ष्य की ओर दृष्टि रखता है, उसी प्रकार सम्यग्दृष्टि जीव गृहस्थी के भीतर रहता हुआ भी अपने स्वरूप की ओर ही दृष्टि रखता है। सम्यग्दृष्टि वही है, जो अपनी अनादिकालीन भूल को समझकर दूर करने का प्रयत्न करता है।

श्रुतज्ञान अक्षरात्मक होता है और अक्षर का अर्थ जानते हो क्या? "अक्षम् आत्मानं राति ददातीति अक्षरः" जो आत्मा को दे वह अक्षर है। एतावता आत्मज्ञान में सहायक शास्त्र ही यथार्थ में शास्त्र है। उनका अभ्यास करो तो अन्तर की दृष्टि खुल जायेगी। ❑

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मुनिश्री क्षमासागरजी की प्रेरणा से मैत्री समूह द्वारा आयोजित

जैन युवा प्रतिभा सम्मान समारोह

(Young Jaina Award - 2002)

विगत वर्ष (2001) की तरह इस वर्ष भी समूचे भारतवर्ष के विशिष्ट योग्यता प्राप्त करने वाले जैन छात्र-छात्राओं का सम्मान मैत्री समूह के द्वारा जयपुर (राजस्थान) में 11-12-13 अक्टूबर को आयोजित किया जावेगा।

सन् 2002 में 10वीं एवं 12वीं कक्षा (State/CBSE), में 75% से अधिक अंक अर्जित करने वाले तथा CPMT/State PMT, CPET/State PET, NTSE और IIT में चयनित (Select) होने वाले जैन छात्र-छात्राएँ अपनी मार्कशीट एवं स्थायी पता सहित अपना पासपोर्ट साइज फोटोग्राफ निम्न पते पर 30 अगस्त 2002 तक भेजकर अपना नाम दर्ज कराएं।

सुरेश जैन, आई.ए.एस.
30, निशात कॉलोनी, भोपाल- 462 003
दूरभाष : (0755) 555533 फैक्स : (0755)468049
E-mail : sureshjain17@hotmail.com

मैत्री समूह

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

रजि. नं. UP/HIN/29933/24/1/2001-TC

डाक पंजीयन क्र.-म.प्र./भोपाल/588/2002

जिनभाषित

अगस्त 2002

मासिक

वर्ष 1, अङ्क 7

सम्पादक
डॉ. रतनचन्द्र जैन

◆

कार्यालय
137, आराधना नगर,
भोपाल- 462003 (म.प्र.)
फोन नं. 0755-776666

◆

सहयोगी सम्पादक
पं. मूलचन्द्र लुहाड़िया
पं. रतनलाल बैनाड़ा
डॉ. शीतलचन्द्र जैन
डॉ. श्रेयांस कुमार जैन
प्रो. वृषभ प्रसाद जैन
डॉ. सुरेन्द्र जैन 'भारती'

◆

शिरोमणि संरक्षक
श्री रतनलाल कँवरीलाल पाटनी
(मे. आर.के.मार्बल्स लि.)
किशनगढ़ (राज.)
श्री गणेश कुमार राणा, जयपुर

◆

द्रव्य-औदार्य
श्री गणेशकुमार राणा
जयपुर

◆

प्रकाशक
सर्वोदय जैन विद्यापीठ
1/205, प्रोफेसर्स कॉलोनी,
आगरा-282002 (उ.प्र.)
फोन : 0562-351428, 352278

◆

सदस्यता शुल्क

शिरोमणि संरक्षक	5,00,000 रु.
परम संरक्षक	51,000 रु.
संरक्षक	5,000 रु.
आजीवन	500 रु.
वार्षिक	100 रु.
एक प्रति	10 रु.

सदस्यता शुल्क प्रकाशक को भेजें।

अन्तस्तत्त्व

पृष्ठ

◆ **प्रवचन**

- सम्यग्दर्शन : आचार्य श्री विद्यासागर जी — आवरण पृष्ठ 2

◆ **आपके पत्र : धन्यवाद** — 3

◆ **सम्पादकीय** : जैन पंचायत गुवाहाटी का सराहनीय कदम — 5

◆ **लेख**

- तीर्थ संस्कार-संरक्षण में अपूर्व अवदान : सुमतचन्द्र दिवाकर — 7
- अनावर्ती कालो व्रजति : ब्र. सुमन शास्त्री — 10
- आचार्य ज्ञानसागरजी का व्यक्तित्व एवं कृतित्व : ब्र. शान्ति कुमार जैन — 12
- जिनदेव-दर्शन की सार्थकता : डॉ. सुरेन्द्र कुमार जैन — 13
- जैन विश्वविद्यालय : क्यों और कैसे? : कुमार अनेकान्त जैन — 15
- अनदेखा सच : कविता-नितिन सोनी — 19

◆ **जिज्ञासा-समाधान** : पं. रतनलाल बैनाड़ा — 21

◆ **बारह भावना** : मंगतराय जी — 24

◆ **व्यक्ति और कृति** : डॉ. आनन्द जैन — 26

◆ **प्राकृतिक चिकित्सा :**

- अनिद्रा का प्राकृतिक उपचार : डॉ. वन्दना जैन — 27

◆ **साहित्य-समीक्षा** : जन-जन के महावीर : डॉ. सुरेन्द्र जैन 'भारती' — 31

◆ **कविता** : जीवन है बादल की बूँद : लालचन्द्र जैन 'राकेश' — 25

◆ **सुभाषित** : पं. सनत कुमार
विनोद कुमार जैन — 12, 29

◆ **समाचार** — 6, 14, 23, 28-30

◆ **चिह्न देखकर मांसाहारी खाद्य पदार्थ खरीदने से बचें** — 32

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आपके पत्र, धन्यवाद : सुझाव शिरोधार्य

आपकी शोध-पत्रिका ''जिनभाषित'' का मैं नियमित पाठक हूँ। उसमें प्रकाशित सामग्री -तर्कसंगत, विवादविहीन, युगानुकूल,सरस एवं सर्वगम्य रहती है। अतार्किक अथवा आर्ष-विमुख सामग्री का विरोध वह उसी निर्भीकता के साथ करती है, जिस प्रकार कि आर्ष-सम्मत सामग्री का पुरजोर समर्थन।

मैं सन् 1945-46 से ही उच्चस्तरीय पत्र-पत्रिकाओं का नियमित पाठक रहा हूँ तथा सन् 1950 के दशक में कुछ उच्चस्तरीय पत्रिकाओं का सम्पादक भी रहा। इस दिशा में पत्रकारिता के क्षेत्र में कुछ खट्टे-मीठे अनुभव भी किये। उसकी विषम कठिनाइयों का भी अनुभव किया और यह यथार्थ है कि किसी पत्रिका को नियमित रूप से चलाते रहना सचमुच ही बड़ा कठिन कार्य है।

फिर भी, आपकी पत्रिका 'जिनभाषित' नियमित ही नहीं, बल्कि उत्तरोत्तर प्रगतिशील भी है, इसका समस्त श्रेय निश्चय ही आपके कुशल सम्पादन एवं धैर्यसाध्य प्रबन्धन के लिये है। इन सब कारणों से जैन पत्रकारिता के क्षेत्र में आपका और आपकी पत्रिका का स्थान निस्सन्देह ही अन्यतम है।

जिनभाषित की प्रामाणिक शोध सामग्री, शुद्ध, नयनाभिराम मुद्रण एवं टाईप-सैटिंग आदि को देखकर प्राच्यकालीन 'जैनहितैषी' और उसके सम्पादकप्रवर पं.नाथूराम जी प्रेमी (बम्बई) तथा 1960 के दशक के 'अनेकान्त' एवं उसके कुशल सम्पादक पण्डितप्रवर जुगलकिशोर जी मुख्तार साहब के निर्भीक सम्पादकीय वक्तव्य, सम्पादन-कौशल एवं प्रकाशित सामग्री की प्रामाणिकता का सहसा ही स्मरण आ जाता है।

आपकी स्वयं और आपकी पत्रिका की भविष्य में भी यही प्रगतिशील निर्भीक स्थिति बनी रहे, इसी मंगल कामना के साथ।

प्रो. (डॉ.) राजाराम जैन
महाजन टोली नं.2
आरा (बिहार)-802301

जिनभाषित (जून अङ्क) मिला। मुखपृष्ठ पर प.पू. सरलसंत आचार्य ज्ञानसागर जी का चित्र पाकर आत्मिक खुशी हुई है।

दो दिनों में पूरे पृष्ठ बाँच लिये। रोचक एवं ज्ञानवर्धक सामग्री के लिए धन्यवाद। पृ. 9 पर प. पू. मुनिक्षमासागर जी का लेख 'आचार्य ज्ञानसागर जी की साहित्य साधना' शीर्षक के अनुकूल साधना से अवगत कराता है। पृ. 15 पर पुन: मुनिवर का शब्द-चित्र अतीत के बन्द गवाक्ष खोलता प्रतीत होता है, हृदय-प्रधान है उनकी शैली। पृ. 17 पर भी उनकी कलम का प्रकाश सुन्दर बोध कराता है। उनकी कृति 'आत्मान्वेषी' मैं अनेक बार पढ़ चुका हूँ और फिर पढ़ने लगता हूँ। उनके श्री चरणों में नमोऽस्तु।

मुनिश्रेष्ठ पू. योगसागर जी कृत 'पूजा' पृ. 18 पर पढ़ने मिली। सुन्दर रचना है। मुनियों और श्रावकों के लिए प्रेरणाकारी है। उनके चरणों में भी नमोऽस्तु।

अन्य लेखकों में-डॉ. शीतलचन्द्र जैन, पं. रतनलाल बैनाड़ा, डॉ. निहालचंद जैन, डॉ. राजुल जैन, डॉ. (ब्र.) रेखा जैन, श्री अशोक शर्मा, श्री श्रीपाल दिवा, कवि (प्रो.) सरोजकुमार के 'शब्दसमूह' मेरी सराहना पाते है; उन सभी का साधुवाद।

प.पू. आचार्य विद्यासागर जी की कविता बहुत प्रभावशील है; इसे मूकमाटी में पढ़ने का पृथक् आनंद है, जिनभाषित में पढ़ने का पृथक्। उनके श्रीचरणों में नमोऽस्तु।

अंत में चर्चा कर रहा हूँ 'सम्पादकीय' की। आपने सम्पादकीय के स्थान पर एक स्वतंत्र लेख दे दिया है, जो पू. आचार्य ज्ञानसागर जी के 30 वें समाधिदिवस की प्रासंगिकता में सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण निबन्ध बनकर प्रकट हुआ है। बधाई।

पत्रिका में; आपके सम्पादन में; त्रुटियाँ, बुराइयाँ, खामियाँ खोजता रहा, पर उनके दर्शन नहीं हो सके। आप मँजे हुए 'खिलाड़ी' जो हैं। पर आगामी किसी अङ्क में कुछ पाया तो अवश्य लिखूँगा।

सुरेश सरल
सरल कुटी, 293, गढ़ा फाटक, जबलपुर

'जिनभाषित' मई अङ्क का सम्पादकीय 'दोनों पूजा पद्धतियाँ आगमसम्मत' पढ़ा। आपने वैद्धिक ईमानदारीपूर्वक आगम के आलोक में वस्तु स्थिति का निरूपण किया है। श्री पं. सदासुखदासजी ने श्रीरत्नकरण्ड श्रावकाचार की हिंदी टीका श्लोक 119 में बहुत विस्तार से पूजा परम्परा का वर्णन गति, पर्याय और स्थिति के संदर्भ में किया है जो मूलत: पठनीय है।

जैन धर्म अहिंसा-अपरिग्रहयुक्त वीतरागता का पोषक है। इसमें अंतरंग अभिप्राय का अधिक महत्त्व है। इसी कारण पं. सदासुखदास जी ने ठीक ही कहा है कि ''अपने भावनि के अधीन पुण्य बन्ध के कारण हैं''। इसके आगे पं. जी सा. ने जैन दर्शन की अहिंसा की साधना हेतु सचित्त पूजन का सतर्क निषेध किया है। उनके अनुसार ''इसलिये जो ज्ञानी हैं, धर्मबुद्धि वाले हैं वे तो सभी धर्म के कार्य यत्नाचार से करते हैं, करना चाहिये। जिस प्रकार जीवों की विराधना न होवे उस प्रकार करना चाहिये। फूलों के धोने में दौड़ते हुए त्रस जीवों की बहुत हिंसा होती है। इसमें हिंसा तो बहुत है तथा परिणामों की विशुद्धता थोड़ी है। इसलिये पक्षपात छोड़ कर जिनेन्द्र के कहे अहिंसा धर्म को ग्रहण करके जितना कार्य करो, उतना यत्नाचारपूर्वक जीवों की विराधना टालकर करो।''

दक्षिण भारत में शैव धर्मावलम्बियों द्वारा जैन समाज एवं साधुओं पर भीषण अत्याचार किये गये। जिसका वर्णन उनके ग्रंथ 'समणमुतमिलं' एवं 'शैव तिरुतोण्डर' पुराणों में है। अपनी रक्षा हेतु जैनों ने अपनी पूजा पद्धति वैदिक रूप में अपना ली। उत्तर भारत में शुद्धाम्नाय का पोषण होता रहा। इसी कारण उत्तर भारत विशेषकर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बुन्देलखण्ड शुद्धाम्नाय का पोषक रहा, जो उचित ही है।

आपका यह मत सही है कि पूजा पद्धति समाज को वर्गीकृत न करे और न ही इसमें कोई हस्तेक्षप करे। ऐसा कतिपय मुनिराज करते हैं। जहाँ तक विवेकसंगत हो, अहिंसा की आराधना-साधनानुसार पूजा पद्धति शुद्ध प्रासुक, अहिंसक या न्यूनतम हिंसायुक्त हो जिससे भावानुसार अधिकतम पुण्यबंध हो, यही इष्ट है। फल तो भावों का होता है। समाजभय से सचित्त को इष्ट मानते हुए बाह्य में मौन रहना और अचित्त की पुष्टि न करना भी दोषपूर्ण होता है। आप सम-सामयिक विषयों पर मार्गदर्शन कर उससे सम्बन्धित विचारों को प्रकाशित कर पाठकों को निर्णय का अवसर देते हैं। धन्यवाद! अंक की अन्य रचनाएँ भी ज्ञान एवं स्वास्थ्यवर्द्धक हैं। बधाई!

डॉ. राजेन्द्र कुमार बंसल
बी-369, ओ.पी.एम. अमलाई

(समाजभय से या स्वगृहीत मान्यता के विरोधी होने से आर्षवचनों का प्रच्छादन एवं उन पर अनार्षत्व का आरोपण भी दोषपूर्ण है -सम्पादक)

'जिनभाषित' का जून, 2002 का अंक पाकर प्रसन्नता हुई। इसमें आपने पत्रस्तम्भ में मेरे पत्र को भी सम्मिलित करके मूल्यवान् बनाया, इसके लिए भूरि-भूरि साधुवाद लें।

परन्तु, मरे पत्र में 'आर्हत्' अशुद्ध छप गया है। शुद्ध शब्द हलन्तहीन 'आर्हत' है। जैसे 'भगवत्' से, अण् प्रत्यय करने पर, 'भागवत' होता है, वैसे ही 'अर्हत्' से 'आर्हत' होता है।

महामहिम आचार्य श्री ज्ञान सागरजी महाराज पर केन्द्रित यह अंक उनके तपोदीप्त प्रशिष्य मुनिपुंगव श्री सुधासागर जी महाराज के साहित्यानुसन्धान कार्य का ही पल्लवित क्रोडपत्र है, इसमें सन्देह नहीं। साधुवाद।

डॉ. श्रीरंजन सूरिदेव
पी.एन.सिन्हा कॉलोनी,
भिखनापहाड़ी, पटना-800004

'जिनभाषित' का जून अंक 5 बेहद रोचक लगा है। पत्रिका में आचार्य श्री ज्ञानसागर जी की जीवनयात्रा को विस्तार से पढ़ने के बाद बहुत अच्छा लगा, क्योंकि ऐसी सूक्ष्म जानकारी अन्य किसी पत्रिका में नहीं प्राप्त होती। ''आपके पत्र'' कॉलम में पाठकों की संख्या को देखते हुए ऐसा प्रतीत होता है कि इस कम्प्यूटर के युग में भी लोग समय निकालकर सार तत्त्वों से सहित पत्रिका 'जिनभाषित' को पढ़कर पत्रिका का विस्तार कर रहे हैं एवं जरूरी जानकारी से ज्ञानकोष बढ़ा रहे हैं। अत: मैं ऐसे लोगों का आभार मानता हूँ।

श्रीपाल जैन
मेनरोड, गोटेगाँव (नरसिंहपुर) म.प्र.

'जिनभाषित' का जून, 2002 अङ्क मिला। आपने संपादकीय में त्याग और मानवता की मूर्ति महाकवि आचार्यश्री ज्ञानसागर जी बाबत अच्छी जानकारी देकर बहुत अच्छा काम किया है। उनके लोकोत्तर शिष्य मुनि श्री विद्यासागर जी देश में ज्ञान का प्रकाश फैला रहे हैं। मुनि श्री क्षमसागर जी का लेख-'वीतरागता की पराकाष्ठा' बहुत अच्छा लगा। डॉ. सुरेन्द्र कुमार जैन 'भारती' का प्रश्न 'सजा किसे?' बहुत अच्छा लगा। डॉ. नरेन्द्र जैन 'भारती' ने अपनी कलम से यह सही लिखा है कि 'चिंतन से श्रेष्ठ विचार प्रकट होते हैं।' यदि अपने कार्यों का लगातार चिंतन करें, तो निश्चित ही हमने क्या अच्छा किया और क्या बुरा किया, यह पिक्चर सामने आ जाती है तथा यही पिक्चर हमें बुरे कार्यों से दूर रहने तथा अच्छे कार्यों की ओर बढ़ने का मार्ग प्रशस्त करती है। यदि इसी प्रकार का चिंतन समाज और देश के बारे में सभी लोग करने लगें तो आगे आने वाले दिन बहुत सुनहरे हो सकते हैं। डॉ. रेखा जैन का प्राकृतिक चिकित्सा पर लेख-'दमा का उपचार' उन सभी रोगियों के लिए बहुत उपयोगी है, जो इस बीमारी से पीड़ित हैं। पत्रिका के प्रत्येक अंक में इस तरह की सामग्री लगातार देते रहें तो बहुत अच्छा होगा। पत्रिका शुरू से अंत तक पठनीय, ज्ञानवर्धक व बहुत सारी जानकारियों से युक्त है।

शुभकामनओं सहित।

राजेन्द्र पटोरिया
सम्पादक,
खनन भारती
सिविल लाइन्स, नागपुर

आई.ए.एस. (प्री) में 3 प्रशिक्षार्थी उत्तीर्ण

जैनाचार्य 108 श्री विद्यासागर जी महाराज के आशीष व प्रेरणा से संचालित भारतवर्षीय दिगम्बर जैन प्रशासकीय प्रशिक्षण संस्थान मढ़िया जी जबलपुर के 3 प्रशिक्षार्थी क्रमश: श्री राजीव जैन बाँदा, श्री मनीष जैन, बन्डा एवं श्री सत्येन्द्र जैन कँदवाँ ने आई.ए.एस. (प्री.) में उत्तीर्ण होकर समाज एवं नगर के गौरव में श्री वृद्धि की। उक्त के अतिरक्त यूपीपीएससी (प्री) में चार प्रशिक्षार्थी क्रमश: कु. प्रीति जैन ललितपुर, श्री राजीव जैन बाँदा, श्री सत्येन्द्र जैन कँदवाँ, श्री अभिलाष जैन, सागर एवं मुख्य परीक्षा में तीन क्रमश: कु. वन्दना जैन, कु. अरुणा सचान एवं श्री नीलेश जैन कोतमा उत्तीर्ण हुए हैं। संस्थान निदेशक अजित जैन एडवोकेट एवं अधीक्षक मुकेश सिंघई द्वारा दी गई जानकारी के अनुसार संस्थान के चालू सत्र में 86 प्रशिक्षार्थी प्रशिक्षणरत हैं।

मुकेश सिंघई

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सम्पादकीय

जैन पंचायत गुवाहाटी का सराहनीय कदम

'जिनभाषित' के सितम्बर 2001 के अंक में हमने स्व. पं. जुगलकिशोर जी मुख्तार का एक पुराना लेख 'भवाऽभिनन्दी मुनि और मुनिनिन्दा' पुनर्मुद्रित किया था। पण्डित जी ने उसमें दिगम्बर जैन परम्परा में छद्ममुनियों की बढ़ती संख्या पर रोक लगाने के लिए जैनश्रावकों का आह्वान किया है। कारण यह है कि जैसे सच्चे मुनियों के उज्ज्वल आचरण से धर्म की प्रचुर प्रभावना होती है, वैसे ही छद्ममुनियों का कुत्सित आचरण धर्म के उज्ज्वल मुख पर गाढ़ी कालिख पोत देता है। दश सच्चे मुनि मिलकर धर्म को जितना यशस्वी बनाते हैं, एक छद्ममुनि अकेला ही उस सब पर पानी फेरने में सफल हो जाता है। कहावत है कि एक मछली सारे तालाब को गन्दा कर देती है। अत: जिनतीर्थ के शाश्वत प्रवर्तन के लिए श्रावकों को इस बात की निगरानी करना जरूरी है कि दिगम्बर जैन परम्परा में छद्ममुनियों की दाल न गल पावे।

माननीय मुख्तार जी ने उपर्युक्त लेख में लिखा है-''मुनियों को बनाने और बिगाड़ने वाले बहुधा गृहस्थ-श्रावक होते हैं और वे ही उनका सुधार भी कर सकते हैं, यदि उनमें संगठन हो, एकता हो और वे विवेक से काम लेवें। उनके सत्प्रयत्न से नकली, दम्भी और भेषी मुनि सीधे रास्ते पर आ सकते हैं। उन्हें सीधे रास्ते पर लाना विवेकी विद्वानों का काम है।''

आज जहाँ आगमानुकूल चर्या करनेवाले सच्चे मुनियों के अनेक संघ विद्यमान हैं, वहीं छद्ममुनियों की भी बाढ़ आ रही है, जिनका अवांछनीय भ्रष्ट आचरण निर्मल जिनशासन को मलिन करने में कोई कसर नहीं छोड़ रहा है। समय आ गया है कि अब श्रावक संगठित होकर छद्ममुनियों की बढ़ती संख्या पर रोक लगाने के अपने कर्त्तव्य का पालन करें और जिनशासन को कलांकित होने से बचावें।

गुवाहाटी की जैन पंचायत ने इस दिशा में स्वागतयोग्य पहल की है। छद्ममुनियों के भ्रष्ट आचरण से पीड़ित होकर पंचायत की कार्यकारिणी सभा ने सर्वसम्मति से एक प्रस्ताव पारित किया है, जो अत्यन्त सराहनीय है। उक्त प्रस्ताव 'जैन गजट' (27, जून 2002) में प्रकाशित हुआ है। उसे यहाँ ज्यों का त्यों उद्धृत किया हा रहा है-

प्रस्ताव

दि. 25.5.2002 को श्री दि.जैन पंचायत, गुवाहाटी की कार्यकारिणी सभा में निम्नलिखित प्रस्ताव सर्वसम्मति से पारित किये गये

१. श्री दि. जैन गुवाहाटी की कार्यकारिणी समिति की यह सभा कतिपय दिगम्बर साधु संतों में व्याप्त व्यापक शिथिलाचार पर गहन चिन्ता व्यक्त करती है। साथ ही सभा सर्वसम्मति से यह निर्णय लेती है कि कोई भी दिगम्बर जैन साधु या साध्वी निम्नलिखित शिथिलाचारों में लिप्त देखा जाता है तो उस साधु को या साध्वी को श्री दिगम्बर जैन पंचायत गुवाहाटी कभी भी चातुर्मास हेतु या अल्पकालीन प्रवास हेतु श्रीफल भेंट कर गुवाहाटी आने का निमन्त्रण नहीं देगी तथा ऐसा साधु या साध्वी अगर स्वयं चलकर गुवाहाटी आ जाये तो उसे ठहरने हेतु महावीर भवन या अन्य स्थान उपलब्ध नहीं करायेगी। इस प्रकार के शिथिलाचारी साधु या साध्वियों की यह पंचायत पूर्ण रूप से उपेक्षा करेगी तथा उन्हें आहारआदि के लिए भी निवेदन नहीं करेगी।

शिथिलाचार के मुख्य बिन्दु : ☐एकल विहारी साधु सा साध्वी ☐ संघ में परिग्रह संग्रह करने की प्रवृत्ति ☐ पदलोलुपता, उपाधि लोलुपता, मठ मन्दिर तथा नवीन तीर्थ निर्माण करने की होड़/योजना ☐चन्दा-चिट्ठा संग्रह करने की प्रवृत्ति ☐अकेली स्त्रियों को संघ में रखने की प्रवृत्ति ☐टेलीफोन, मोबाईल फोन, फ्रिज, एयर कन्डीशनर, टी.वी. कैमरा आदि का मोह ☐चारित्रिक ख्याति लाभ करने की प्रतिस्पर्धा ☐अपने विचारों से असहमति रखने वालों के प्रति असहिष्णुता ☐समाज में विघटन पैदा करने की प्रवृत्ति।

२. उपर्युक्त शिथिलाचारी साधु या साध्वियों को श्री दिगम्बर जैन पंचायत गुवाहाटी की अनुमति के बिना कोई भी दिगम्बर जैन समाज गुवाहाटी का सदस्य या उससे जुड़ी हुई कोई भी संस्था गुवाहाटी में निमन्त्रण नहीं कर सकती है और न ही उन्हें अपने निवास स्थान पर या अन्य किसी भी सदस्य के घर में या अन्य किसी सार्वजनिक धर्मशाला में या अन्य स्थान में ठहरा सकती है। अगर कोई भी व्यक्ति या संस्था इस निर्णय के विरुद्ध कार्य करेगी, तो श्री दिगम्बर जैन पंचायत गुवाहाटी को यह अधिकार रहेगा कि वह उस साधु या साध्वी को गुवाहाटी से वापस भेज देवें तथा ऐसे सदस्यों या संस्थाओं के विरुद्ध श्री दिगम्बर जैन पंचायत गुवाहाटी द्वारा- ☐सामाजिक निन्दा प्रस्ताव पास किया जायेगा। ☐समाज की सदस्यता निरस्त कर दी जायेगी। ☐उनको एवं उनके परिवार को समाज की कोई भी सुविधा जैसे महावीर भवन या अन्य भवन आबंटित नहीं किया जायेगा तथा अन्य कोई भी सुविधा नहीं दी जायेगी।

इस प्रकार की कोई भी उचित कार्यवाही श्री दिगम्बर जैन पंचायत गुवाहाटी करेगी।

३. श्री दिगम्बर जैन पंचायत गुवाहाटी की कार्यकारिणी की यह सभा दि. 03.02.2002 रविवार को गुवाहाटी के श्री महावीर भवन में आयोजित समस्त पूर्वांचल के दिगम्बर जैन समाज के प्रतिनिधियों की सभा में शिथिलाचार पर जो प्रस्ताव पारित किया गया था, उस प्रस्ताव की पूर्ण रूप से अनुमोदना करती है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४. श्री दिगम्बर जैन पंचायत गुवाहाटी की कार्यकारिणी की यह सभा भारतवर्षीय दिगम्बर जैन महासभा की लखनऊ में आयोजित दि. 28-29 जुलाई 2001 की सभा में मुनियों के शिथिलाचार सम्बंधी जो अष्टसूत्री प्रस्ताव पारित किया गया था उस प्रस्ताव का पूर्ण रूपेण समर्थन करती है।

तनसुखराय सेठी (कार्यकारी अध्यक्ष) रतनलाल रारा (मंत्री)

इस प्रस्ताव का हम अभिनन्दन एवं अनुमोदन करते हैं। यहाँ हम इतना विवेक रखने की आवश्यकता महसूस करते हैं कि मन्दिर निर्माण की प्रेरणा को मुनियों के शिथिलाचार में शुमार न किया जाय। जहाँ सामाजिक और ऐतिहासिक दृष्टि से धर्म की प्रभावना हेतु मन्दिर आदि के निर्माण की आवश्यकता महसूस की जा रही हो, वहाँ उसके निर्माण की प्रेरणा देना मुनियों का कर्त्तव्य है, क्योंकि यह जिनशासन की उन्नति का हेतु है और मुनियों का कार्य जिनशासन की उन्नति करना भी होता है-''आचार्या जिनशासनोन्नतिकरा:''। तथा श्रावकधर्म का उपदेश देना भी मुनियों का कर्त्तव्य है, जिसमें मन्दिर निर्माण का उपदेश भी शामिल है। अत: कोई मुनि यदि मन्दिर निर्माण की केवल प्रेरणा देता है और मार्गदर्शन करता है, तो वह शिथिलाचारी नहीं है। हाँ, यदि वह इसके लिए स्वयं चन्दा इकट्ठा करता है और उसका स्वयं हिसाब-किताब रखता है तथा निर्माणकार्य की स्वयं देख-रेख करता है, तो यह मुनिधर्म के विरुद्ध है, अत: इस प्रवृत्ति को हतोत्साहित अवश्य किया जाना चाहिए। गुवाहाटी जैन पंचायत को कोटिश: साधुवाद।

रतनचन्द्र जैन

मुनिश्री सुधासागरजी का चातुर्मास बिजौलिया में

श्रमण संस्कृति के अन्तर्गत इस संतप्त सृष्टि में अष्ट कर्मों के विमोचन एवं रागद्वेष कषायों की निवृत्ति से परम सुख की प्राप्ति होती है। अहिंसा व्रत के अविरल पालन करने से श्रमण श्रमणता की ओर बढ़ जाता है। आकुलता, व्याकुलता तथा संक्लेश भावों से दूर रहकर वे अपनी आत्मा में निहित भावों को जागृत कर लेते हैं और उनका कल्याण हो जाता है। ये उद्गार परमपूज्य मुनि पुंगव 108 श्री सुधासागरजी महाराज ने श्री दिगम्बर जैन पार्श्वनाथ तीर्थक्षेत्र बिजौलिया में अपने चातुर्मास स्थापन के अवसर पर प्रकट किये।

चारित्र चक्रवर्ती आचार्य 108 श्री शान्तिसागरजी महाराज, जिनकी पावन परम्परा में आज श्रमण संस्कृति पुन: जीवित हुई, उनके विषय में बतलाते हुये मुनिश्री ने आगे कहा कि इन आचार्य श्री ने अपने मंगल उद्बोधन में कोलकत्ता में कहा था कि जहाँ हवा का प्रवेश हो सकता है, वहाँ दिगम्बर मुनि का प्रवेश हो सकता है तथा पंचम काल के अन्त तक भावलिंगी मुनियों का उद्भव व बिहार होता रहेगा। उन पर किसी का दबाव नहीं चल सकता और न ही वे किसी की अनुकूलता पर निर्भर रहते हैं। पावस काल में साधुगण अपने ध्यान, आत्मसाधना एवं अहिंसा व्रत के परिपालन हेतु एक ही स्थान पर ठहरते है और इस वर्ष मुनि श्री ससंघ ने इस क्षेत्र को अपने चातुर्मास हेतु चुना है।

मुनि श्री ने क्षुल्लकद्वय 105 श्री गंभीर सागर जी, धैर्यसागरजी एवं ब्र. संजय भैया के साथ भगवान् 1008 श्री पार्श्वनाथ की तपोभूमि में शोभायात्रा के साथ मंगल प्रवेश किया। यहाँ पहुँचने पर क्षेत्र के पदाधिकारियों एवं बाहर से पधारे विशिष्ट महानुभावों तथा अपार श्रद्धालुओं ने उनका भावभीना स्वागत किया। कोटा के श्री रिषभ मोहीवाल के संयोजन में श्री सुगनचन्द्र कैलाशचन्द्र मांडलगढ ने, जो क्षेत्र के महामंत्री भी है, जिलाधीश बून्दी आदि के साथ चातुर्मास हेतु ध्वजारोहण किया। बाद में मुनि श्री ने धार्मिक क्रियाओं के साथ अपना चातुर्मास स्थापित किया। मंगल कलश की स्थापना का सौभाग्य श्री भंवरलाल पटवारी बिजौलिया ने अर्जित किया एवं इस काल में अखंड ज्योति की व्यवस्था श्री अशोक पाटनी आर.के. मार्बल्स लि. मदनगंज की ओर से घोषित की गई। महाकवि आचार्य 108 श्री ज्ञानसागरजी, संत शिरोमणि आचार्य 108 श्री विद्यासागरजी, मुनि पुंगव 108 श्री सुधासागरजी, यक्षरक्षित सांगानेर के जिनबिम्ब और सांगानेर के 1008 आदिनाथ भगवान् के विशाल चित्रों के अनावरण का सौभाग्य क्रमश: सर्वश्री अशोकजी पाटनी, मदनगंज, गणेशजी राणा जयपुर, राजेन्द्र श्री गोधा प्रधान सम्पादक ''समाचार जगत'' जयपुर, आशुतोष गुप्ता जिलाधीश बून्दी एवं बाबूलाल जैन एसपी बून्दी की धर्मपत्नी ने अर्जित किया।

इस अवसर पर मुनि श्री क्षुल्लकद्वय एवं ब्रह्मचारीजी को क्रमश: सर्वश्री चांदमल निर्मलकुमार धनोपिया, भंवरलाल अभयकुमार बेगू, मदनलाल गोधा एवं पद्मकुमार महावीर कुमार कासलीवाल बेगू द्वारा शास्त्र भेंट किये गये। मुनि श्री ससंघ के आवास हेतु एक संतशाला का निर्माण प्रारंभ हो गया है, जो अतिशीघ्र पूर्ण हो जायेगा एवं मुनि श्री ससंघ वही विराजेंगे।

क्षेत्र के भव्य लेमीनेटेड चित्रों का अनावरण भी भँवरलाल पटवारी ने किया। आचार्य 108 श्री ज्ञानसागर जी महाराज के चित्र के समक्ष श्री गणेश राणा जयपुर ने जिलाधीश एवं श्री अशोक पाटनी के सहयोग से मंगल दीप प्रज्वलित किया। उपर्युक्त सभी के साथ अजमेर, जयपुर, भीलवाडा, केकडी, बून्दी, ब्यावर आदि स्थानों से पधारे गणमान्य अतिथियों का समिति की ओर से माला, तिलक श्रीफल एवं लेमीनेटेड फोटो भेंट कर भावभीना सम्मान किया गया। इस क्षेत्र के महामंत्री श्री सुगनचंद शाह ने बतलाया कि चातुर्मास काल में मुनिश्री का प्रतिदिन मंगल प्रवचन प्रात: 8 बजे से प्रवचन हाल में होगा। एवं दोपहर में ''राजवार्तिक'' का स्वाध्याय एवं समय-समय पर विभिन्न कार्यक्रम आयोजित होंगे। संभवतया रविवार को मुनि श्री का विशेष मंगल प्रवचन रहेगा। अतिथियों के लिए आवास एवं भोजन की समुचित व्यवस्था है। बिजौलिया का सम्पर्क सूत्र दूरभाष - 01489-36074 है।

हीराचन्द्र जैन, सहप्रचार प्रसार संयोजक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तीर्थ संस्कार संरक्षण में अपूर्व अवदान

सुमतचन्द्र दिवाकर, सतना (म.प्र.)

राजा श्रेयांस द्वारा भगवान ऋषभदेव को प्रथम बार आहार दान दिया गया था। यह आहारदान एक गृहस्थ के द्वारा दिगम्बर मुनि को दिया गया उस युग का दिशानिर्देशक दान था। राजा श्रेयांस द्वारा दिशानिर्देशन के कारण उन्हें दान तीर्थ का प्रवर्तक माना जाता है। उनका गौरव सर्वश्रेष्ठ दान दातारों की श्रेणी में स्थापित हुआ। उसी प्रकार पूज्य 108 आर्यनन्दी जी मुनि महाराज ने वर्तमान युग में तीर्थ रक्षा के हितार्थ संकल्प लिया था। उन्होंने तीर्थ क्षेत्र रूपी प्राचीन जैन सांस्कृतिक धरोहरों के रक्षण हेतु समस्त दिगम्बर जैन समाज के मन में कर्त्तव्यबोध और निजत्व बोध का मंत्र फूँका। आतताइयों से तीर्थों के संरक्षण हेतु समाज को यथा सामर्थ्य दान देने हेतु प्रोत्साहित किया। इस प्रकार सम्पूर्ण दिगम्बर जैन समाज से विपुल धन दान कराकर अखिल भारतीय तीर्थ रक्षा कमेटी के कोश को तीर्थरक्षण में सक्षम बनाया, इसलिये उन्हें 'तीर्थ रक्षा शिरोमणि तिलक' माना जाना सर्वथा उपयुक्त है। इस पुण्यकार्य को करते हुए अनेक स्थानों पर अज्ञानियों द्वारा उन पर चलाए आलोचना रूपी व्यंग्य बाणों का उन्होंने सहजता से सामना किया। तर्क-वितर्क तथा अनेक प्रकार के समाधानों द्वारा उन्हें दान का औचित्य समझाना पड़ा। अनेक स्थानों पर कतिपय व्यक्तियों द्वारा उन्हें दिगम्बर मुनि की मर्यादा का बोध कराने का अनधिकृत प्रयास किया गया, परन्तु पूज्य आर्यनन्दी महाराज ने सदैव अपनी समता तथा सरलता को बनाये रखा। यहाँ तक कि अनेक दिगम्बर साधुओं ने भी उन्हें परिप्रेक्ष्य में नहीं समझा। महाराजश्री इन तमाम स्थितियों का सामना करते हुए निष्काम कर्मयोगी की तरह मंजिल की ओर बढ़ते रहे।

उन्होंने महाव्रतों का निरतिचार पालन करते हुए सम्पूर्ण भारत के प्रायः समस्त तीर्थों की वंदना हेतु यात्रा की। उन्होंने अनेक नगरों का भ्रमण करते हुए चालीस हजार किलोमीटर भूमि अपने उपनय पदों से नापी। इन यात्राओं में सर्दी, गर्मी, आतप तथा हिंसक पशुओं का सामना किया, दुष्ट अज्ञानियों द्वारा निन्द्य वचनों द्वारा आदि अन्य अनेक परिषहों का सामना शान्ति समतापूर्वक वे करते रहे।

ये यात्राएँ मात्र अर्थसंकलन हेतु ही नहीं थीं, अपितु इन यात्राओं से तीर्थ क्षेत्रों की व्यावहारिक कठिनाइयों को भी उन्होंने समझा। वहाँ की कमियों का अवलोकन कर उनके संरक्षण, संवर्द्धन के लिए अपने अमूल्य अनुभवपूर्ण सुझाव दिए। ये अनुभव उन्होंने अपने गृहस्थ जीवन में 30 वर्षीय शासकीय सेवा में रहते हुए अर्जित किये थे। अनेक तीर्थ क्षेत्र जो समय की आँधी के गर्त में ढँक गये थे, उनके उन्नयन हेतु जनमानस को जाग्रत किया। महाराष्ट्र और दक्षिण भारत के अनेक तीर्थ, जो उत्तर भारतीय दिगम्बर जैनों के लिए अनजाने थे, उन्हें उनकी महिमा से अवगत कराया। इसी प्रकार दक्षिण भारतीयों को उत्तर तीर्थों के प्रति रुचिवंत बनाया। बारह वर्षीय अपने अथक प्रयासों से पूरे दिगम्बर समाज में अखिल भारतवर्षीय दिगम्बर तीर्थों के प्रति कर्त्तव्यबोध की एक अमिट लहर प्रवहमान करने का दुर्लभ कार्य उन्होंने पूरा किया। साथ ही, अखिल भारतवर्षीय तीर्थक्षेत्र कमेटी के लिए एक कोटि का फंड एकत्रित कर अपने गुरु समन्तभद्र महाराज की आज्ञा का पालन तथा अपने द्वारा किये संकल्प की पूर्ति के साथ ही श्वेताम्बरों से स्पर्धा हेतु सक्षम बनाया। इस संकल्प पूर्ति के बारह वर्षीय अन्तराल में आचार्य आर्यनन्दी महाराज ने शक्कर का त्याग किया हुआ था। तीर्थक्षेत्रों के प्रति कर्त्तव्यबोध की इस आदर्श भावना तथा अपने गुरु की आज्ञा की दृढ़ता ने ही उन्हें तीर्थ रक्षा शिरोमणि तिलक बना दिया।

पूज्य आर्यनन्दी जी महाराज को यह गौरवपूर्ण तीर्थरक्षा शिरोमणि तिलक उपाधि पूज्य आचार्य विमलसागरजी महाराज तथा पूज्य ऐलाचार्य विद्यानन्द जी महाराज की अनुशंसा से अखिल भारतवर्षीय तीर्थरक्षा कमेटी ने समर्पित की। यद्यपि महाराजश्री ने इसे परिषह जय के रूप में ही स्वीकारा। इस प्रकार तीर्थरक्षा शिरोमणि तिलक के कर्त्तव्य की गरिमा ही नहीं, अपितु भारत-वर्षीय तीर्थ रक्षा कमेटी के अपने गौरव का इतिहास भी है। यद्यपि महाराज श्री ने इन उपाधियों से हमेशा इंकार किया है। वे तो अपने आप को मुनि भी नहीं मानते थे- उनका कहना था कि मुनि कौन? जिसकी ''पाँचों इन्द्रियाँ और मन मौन हो गया हो-वह मुनि है।'' अभी तो मैं अनगारी मात्र हूँ। घर-गृहस्थी छोड़ने वाला पाँच महाव्रतों का पालन करने वाला साधु अनगारी कहलाता है। मैं तो एक विद्यार्थी की तरह मुनि बनने का अभ्यास कर रहा हूँ। अनेक जन्मों तक दिगम्बर महाव्रतधारी बनकर अभ्यास करूँगा, तब मुनि बन पाऊँगा।

तीर्थरक्षण के पुनीत संकल्प की प्रेरणा

एक कोटि फंड के एकत्रित करने के संकल्प का संदर्भ भारतवर्षीय दिगम्बर जैन तीर्थक्षेत्र कमेटी से जुड़ा है। तीर्थक्षेत्र कमेटी की स्थापना सन् 1902 में हुई। सन् 1959 में सर सेठ हुकुमचंद जी के स्वर्गवास के पश्चात् उनका पदभार श्रावकशिरोमणि साहू शान्ति प्रसाद जी ने सम्हाला। इधर श्वेताम्बरों के उत्पात और दबाव तीर्थक्षेत्रों पर निरंतर बढ़ रहे थे। उनके पास अर्थ की प्रचुरता थी। साहूजी के पदभार सम्हालने के लगभग 10 वर्ष पश्चात् सन् 1969 में तीर्थक्षेत्र कमेटी की बैठक पूज्य समन्तभद्र महाराज के सान्निध्य में कुम्भोज बाहुबली में हुई। उस बैठक में आचार्य श्री समन्तभद्र जी ने कहा कि ''दोस्ती और दुश्मनी बराबर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वालों में ही ठीक चल पाती है, अत: तीर्थक्षेत्र कमेटी को यदि शक्तिशाली श्वेताम्बर समाज से मुकाबला करना है तो उसे भी सशक्त बनना होगा। तुम एक करोड़ का ध्रुव फंड तैयार करो। बहुत-सी कठिनाइयों का समाधान आसानी से हो जायेगा।

अनेक वर्षों के प्रयास के पश्चात् जब तीर्थक्षेत्र कमेटी के अनेक कर्णधार महानुभाव वांछित फंड संगृहीत करने में सफल नहीं हो पाये, तब पूज्य आचार्य समन्तभद्र महाराज ने अपने अनन्य प्रिय शिष्य मुनि आर्यनन्दी जी को प्रेरित किया। गुरुआज्ञा को शिरोधार्य कर पूज्य आर्यनन्दी जी महाराज ने सन् 1981 में बेलगाँव में चातुर्मास पश्चात् अपने संकल्पित एक कोटि फंड की दान राशि की पूर्ति के लक्ष्य को पूरा किया। उनके इस महान अवदान ने ही भारतवर्षीय तीर्थरक्षा कमेटी को समस्त तीर्थों के रक्षण, संवर्द्धन के लिए समृद्ध किया।

पूज्य आर्यनन्दी जी महाराज की इस सफलता के लिये बेलगाँव तथा श्रवणबेलगोला में विशाल अभिनन्दन समारोहों का आयोजन हुआ। बेलगाँव में सामूहिक चौके में पूज्यश्री को आहार में मिठाई के ग्रास दिये गये। पूज्य आर्यनन्दी जी महाराज की अनेक यात्राओं के संघपति श्री हीराचंद जी कासलीवाल और उनके परिवार के चौके में महाराज का पड़गाहन हुआ। कासलीवाल जी ने भी लक्ष्य प्राप्ति पश्चात् सर्वप्रथम महाराज को आहार देने का संकल्प लिया हुआ था। आहारदान के उपलक्ष्य में उन्होंने तीर्थक्षेत्र कमेटी के हितार्थ प्रशंसनीय दान राशि घोषित की। श्रवणबेलगोला में सन् 1981 के महामस्तकाभिषेक के विशाल कार्यक्रम के पंडाल में पूज्य आर्यनन्दी जी महाराज का अभिनन्दन पूज्य आचार्य देशभूषण महाराज, ऐलाचार्य धर्मसागर महाराज और उनके संघस्थ साधुओं तथा अन्य अनेक आचार्यों के संघस्थ साधुओं के सान्निध्य में हुआ। उस कार्यक्रम में लगभग डेढ़ सौ दिगम्बर साधु थे। चतुर्विध संघों को मिलाकर एक गरिमामय पिच्छीधारियों की उपस्थिति थी। इस अभिनन्दन समारोह में अपने उद्बोधन में आर्यनन्दी जी महाराज ने अपनी सफलता का समस्त श्रेय अपने गुरु पूज्य समन्तभद्र महाराज को तथा दिगम्बर समाज की उदार दानप्रवृत्ति को दिया, अपने आपको मात्र निमित्त ही कहा। धन्य है, उनकी निस्पृह वृत्ति को।

सिद्धक्षेत्र कुंथलगिरी की विशाल जल योजना के सूत्रधार

कुंथलगिरी के गुरुकुलवासियों, विद्यार्थियों को तथा आसपास के खेतिहरों को सदैव से जलसंकट का सामना करना पड़ता था। कुंथलगिरी सिद्धक्षेत्र की अनेक निर्माण योजनाएँ जलाभाव के कारण अधूरी थीं। तीर्थयात्रियों को भी वहाँ समुचित पानी की व्यवस्था न होने के कारण असुविधा का सामना करना होता था। कुंथलगिरी सिद्धक्षेत्र देशभूषण, कुलभूषण आदि मुनिराजों की निर्वाणभूमि के साथ ही पहाड़ पर अनेक दिगम्बर जैन मन्दिरों वाला मनोरम भव्य दर्शनीय क्षेत्र है। पूज्य चारित्र चक्रवर्ती आचार्य शान्तिसागर महाराज की छत्तीस दिवसीय सल्लेखना पश्चात् यह सिद्धक्षेत्र समस्त भारत के दिगम्बर चतुर्विध संघों, तीर्थयात्रियों के लिये अनिवार्यत: वन्दनीय क्षेत्र है। पूज्य आचार्य आर्यनन्दी महाराज के साधनापथ में भी कुंथलगिरि का महत्त्वपूर्ण स्थान है। यहीं पर उन्होंने चारित्र चक्रवर्ती पूज्य शान्तिसागर महाराज से सप्तम प्रतिमा के व्रत तथा पूज्य समन्तभद्र महाराज से भगवती मुनि दीक्षा प्राप्त की थी। इन्हीं कारणों से पूज्य आर्यनन्दी महाराज कुंथलगिरि क्षेत्र के प्रति कर्त्तव्यबोध से बँधे हुए थे। पूज्य गुरुदेव समन्तभद्र जी महाराज की भावना भी क्षेत्र पर जलापूर्ति की थी। अस्तु, एक बृहद् जल योजना के सूत्रधार गुरुआज्ञा से पूज्य आर्यनन्दी महाराज बने। योजना काफी लागत की थी, जिसे महाराष्ट्र शासन के सहयोग के बिना पूरा नहीं किया जा सकता था। पूज्य महाराजश्री के भक्तों के प्रयास से महाराष्ट्र शासन के तत्कालीन सिंचाई मंत्री शिवाजीराव निलंगेकर को कुंथलगिरी में महाराजश्री के चरणों तक लाया गया। महाराज के प्रभाव से उन्होंने समस्त योजना पूर्ति की स्वीकृति प्रदान कर तुरंत ही साथ आये अफसरों को जल योजना को कार्यान्वित करने का आदेश कर दिया। उनकी इस तत्परतापूर्ण कार्यवाही से प्रभावित महाराज के मुँह से उनके लिये मुख्यमंत्री बनने का आशीष निकल गया। महाराज के सरल चित्त से निकले वचनों का प्रभाव था अथवा संयोग कि शिवाजीराव निलंगेकर छ: माह के अन्तराल में ही महाराष्ट्र राज्य के मुख्यमंत्री मनोनीत हो गये। महाराज तो आशीष प्रदान कर भूल गये थे, परन्तु निलंगेकर जी नहीं भूले थे और वे महाराज के प्रति दृढ़ श्रद्धालु हो गये थे। जल योजना में द्रुत गति आ गयी थी और करोड़ों की योजना शीघ्र ही मुख्यमंत्री की अनुशंसा से पूरी हो गयी। जो जल चारों ओर के पहाड़ों से व्यर्थ बह जाता था, उसे एक जलाशय में एकत्रित कर दिया गया था तथा एक बड़े कूप का निर्माण कर दिया गया था। कूप में सदैव जल की आपूर्ति निर्मित जलाशय के जल से होने लगी। कूप को पाइप लाइनों से जोड़ने पर क्षेत्र को तथा कृषकों को प्रचुर जल मिलने लगा। सूत्रधार के रूप में पूज्य आर्यनन्दी महाराज के कुंथलगिरी क्षेत्र पर किये इस उपकार को कभी भी भुलाया नहीं जा सकेगा।

जीवंत तीर्थों के पोषक

पूज्य आचार्य आर्यनन्दी महाराज ने अपने गुरु, पूज्य समन्तभद्र महाराज द्वारा स्थापित अनेक गुरुकुलों का पोषण अपनी दान प्रेरणा से किया। इन गुरुकुलों में जैनागम का शिक्षण तथा लौकिक शिक्षण गुरुकुल पद्धति से होता है। इस प्रकार दिगम्बर जैन समाज को इन गुरुकुलों द्वारा अनेक उद्भट विद्वानों की शृंखला देकर जीवंत तीर्थों का पोषण उनके द्वारा किया गया। इन गुरुकुलों में समाज के अधिकांश विपन्न वर्ग के बालक नि:शुल्क शिक्षण प्राप्त करते हैं। इन गुरुकुलों में विशेष उल्लेखनीय श्री पार्श्वनाथ दिगम्बर जैन ब्रह्मचर्य आश्रम गुरुकुल एलौरा (वेरुल) है जिसकी स्थापना 5 जून 1962 की श्रुतपंचमी के दिन पूज्य आर्यनन्दी महाराज के सान्निध्य में हुई। इस गुरुकुल में 300 विद्यार्थियों को

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शिक्षण, छात्रावास, भोजन की नि:शुल्क व्यवस्था के साथ धार्मिक और लौकिक शिक्षण भी दिया जाता है।

अन्य उल्लेखनीय गुरुकुल पूज्य आर्यनन्दी जी महाराज द्वारा पोषित देशभूषण-कुलभूषण ब्रह्मचर्याश्रम कुंथलगिरी तथा पूज्य श्री की प्रेरणा से स्थापित श्री नेमिनाथ दिगम्बर जैन ब्रह्मचर्याश्रम गुरुकुल नवागढ़ है। इस गुरुकुल में 200 छात्रों की नि:शुल्क शिक्षण व्यवस्था है। पूज्यश्री द्वारा स्थापित गुरुकुल आज उनके न होने पर भी उसी गरिमा से चल रहे हैं, जैसे कि उनके जीवनकाल में चलते थे। पूज्यश्री द्वारा समाज को प्रेरित कर इस प्रकार की व्यवस्था की गयी है कि अर्थाभाव अथवा अन्य कारणों से इन धर्माश्रयों के संचालन में व्यवधान न आये।

इन आश्रमों से निकले हुए विद्वान स्वेच्छा से वर्षों यहाँ अध्यापन का कार्य सेवाभाव से करते हैं। इस प्रकार विद्वानों की सतत जीवंत शृंखला चल रही है। यह उनके द्वारा धर्म प्रवर्तन का जीवंत स्वरूप है।

सम्मेदशिखर पर स्थापित चौपड़ा कुण्ड मन्दिर

श्वेताम्बरों के प्रबल विरोध का सामना करते हुए पूज्य आर्यनन्दी जी महाराज की प्रेरणा से ही चौपड़ा कुण्ड, सम्मेदशिखर पर मन्दिर निर्माण तथा जिनबिम्बों की स्थापना हो पायी थी। पूज्य आचार्य आर्यनन्दी जी महाराज को इस कार्य को पूरा कराने की प्रेरणा पूज्य आचार्य विमलसागर महाराज से प्राप्त हुई थी। श्री सम्मेदशिखर के पर्वत पर अनेक वर्षों से मूर्तियाँ स्थापना हेतु खुले मैदान में रखी हुई थीं। श्वेताम्बरों द्वारा वहाँ अनेक कानूनी तथा असामाजिक तत्त्वों के माध्यम से व्यवधान उपस्थित किये जाते रहते थे। आचार्य विमलसागर जी जैसे प्रभावक सन्त इस कार्य को पूरा नहीं करा पाये थे। पूज्य विमलसागर महाराज ने एक दिन सहज परिहास में पूज्य आर्यनन्दी महाराज से कहा कि 'यदि चौपड़ा कुण्ड पर आपके होते मन्दिर निर्माण नहीं हो पाया तो आपका ''तीर्थ शिरोमणि तिलक'' कहलाना व्यर्थ है। यह सन् 1996 सम्मेदशिखर चातुर्मास के अवसर पर हुए वार्तालाप का अंश है। दोनों आचार्यों में इस प्रकार का सहज वात्सल्यपूर्ण वार्तालाप यदा-कदा चलता रहता था। आचार्य आर्यनन्दी जी महाराज ने इसे गम्भीरता से विचारते हुए संकल्प किया कि ''जब तक सम्पूर्ण मंदिर-निर्माणकार्य तथा पंचकल्याणक प्रतिष्ठा इन मूर्तियों की नहीं हो जायेगी, तब तक वे चौपड़ा कुण्ड से अन्यत्र कहीं नहीं जायेंगे। इस पावन पुनीत कार्य हेतु उन्हें कितने ही उपसर्ग क्यों न झेलना पड़ें, यहाँ तक कि कारावास अथवा प्राणोत्सर्ग करना पड़े तो करेंगे। उन्होंने नवयुवक उत्साही कार्यकर्ताओं को इस कार्य हेतु प्रेरित करते हुए कहा कि यदि श्वेताम्बरों अथवा अराजकतत्त्वों द्वारा गोलियाँ चलीं, तो पहली गोली वह अपने ऊपर झेलेंगे।'' महाराज के इस प्रकार के निर्णय से कार्यकर्ताओं के मन में हर संघर्ष से जूझने का संकल्प जाग्रत हुआ। अब उन्हें न कानून का भय था, न ही श्वेताम्बरों से मुकाबले का। आचार्यश्री ने दीप स्तम्भ बनकर उनका पग-पग पर मार्गदर्शन किया। निर्माण कार्य हेतु अर्थाभाव की पूर्ति दान दातारों द्वारा महाराज की व्यक्तिगत प्रेरणा से संभव हो सकी।

महाराजश्री पर्वत पर ही अनेक माह तक विराजमान रहे। अनेक मानवीय और प्राकृतिक आपदाएँ उनके सामने आयीं। पर्वत पर रहते हुए सर्दी-गर्मी की भीषणता महाराज की उस वज्र जैसी दुर्बल काया ने झेली। अनेक प्रत्यक्षदर्शियों का कहना है कि ''देव उनकी रक्षा करते थे।'' दिनाँक 23.04.1996 का दिन दिगम्बर जैन समाज के इतिहास में स्वर्णाक्षरों में लिखा जाने योग्य है, जब पूज्य आर्यनन्दी महाराज के सान्निध्य में नवनिर्मित मंदिर की वेदियों पर पंचकल्याणक प्रतिष्ठा पश्चात् तीर्थंकरों की मूर्तियों को विराजमान किया गया। यह एक ऐसी ऐतिहासिक घटना थी, जिसने अखिल भारतवर्षीय दिगम्बर जैन समाज को गौरवान्वित किया। श्वेताम्बरों के विरुद्ध सफलता का कीर्तिध्वज सम्मेदशिखर चौपड़ा कुण्ड पर सदियों तक पूज्य आचार्य 'तीर्थरक्षा शिरोमणि तिलक'' आर्यनन्दी महाराज की कृपा से सदैव लहराता रहेगा। इस प्रकार मुनिश्रेष्ठ विष्णुकुमार जी मुनि की परम्परा को दुहराने वाले आचार्य आर्यनन्दी महाराज के तीर्थों के लिये किये गए कार्यों को सदैव स्मरण किया जावेगा और दिगम्बर जैन समाज उनका सदा ऋणी रहेगा। ऐसे इस युग के मुनिश्रेष्ठ को कोटिश: नमन, जो जीवन भर भारतवर्षीय दिगम्बर जैन तीर्थों के संरक्षण हेतु समर्पित रहे।

सर्वोदय सम्यग्ज्ञान शिक्षण शिविर सम्पन्न

श्री पार्श्वनाथ दिगम्बर जैन उदासीन आश्रम, अशोक नगर, उदयपुर में श्री दिगम्बर जैन महासमिति उदयपुर संभाग एवं श्री दिगम्बर जैन श्रमण संस्कृति संस्थान सांगानेर के संयुक्त तत्त्वावधान में 21 जून, से 29 जून, 2002 तक 8 दिवसीय शिविर का आयोजन किया गया, जिसमें धार्मिक शिक्षण, पूजन एवं संस्कार आदि का प्रशिक्षण दिया गया। 350 शिक्षार्थियों ने शिविर में भाग लिया एवं 217 ने परीक्षायें दीं। आठ दिन तक तीन सत्रों में बालबोध भाग 1,2,3,4 छहढाला, द्रव्यसंग्रह, रत्नकरण्ड श्रावकाचार एवं तत्त्वार्थसूत्र की कक्षायें आयोजित की गईं, जिनमें अध्यापन का कार्य श्रमण संस्कृति संस्थान सांगानेर से पधारे हुए शिविर कुलपति बा. ब्र. श्री महेश भैया जी एवं आठ विद्वानों ने किया। शिविर को परम पूज्य आचार्यरत्न 108 श्री वर्धमानसागर जी महाराज का आशीर्वाद प्राप्त था।

कुन्थुकुमार जैन
संयुक्त महासचिव

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अनावर्ती कालो व्रजति

कभी न लौटने वाला समय जा रहा है

सिद्धान्तरत्न ब्र. सुमन शास्त्री

साइरस के पास जो भी आदमी आता वह उससे कहता- थोड़े में कह दीजिए, समय बहुत कीमती है।' कितना समयज्ञ था वह भव्यात्मा, जी करता है उसके ये श्रेष्ठ-सुन्दर विचार भोजन के रस की तरह अपने रक्त कणों में आत्मसात् कर लूँ।

जहाँ तक मैं समझती हूँ 'समय समयसार है, भगवद् सम्पत्ति है और उसका अपव्यय महान् पाप है।' जो समय को नष्ट करता है समय उसे ही नष्ट कर देता है: क्योंकि उचित समय पर किया गया कार्य उचित फल देता है और असमय अथवा कार्य का समय निकल जाने पर किया गया कार्य कर्त्ता के श्रम और फल दोनों को पी लेता है। एक बार श्रद्धालु धनिक ने अपने नगर में पधारे एक साधु से पूछा-महात्मन्! श्रेष्ठ कार्यों में समय लगाना तो आवश्यक है, किन्तु यदि कोई समयाभाव से वैसा न कर सके तो क्या करना चाहिए? साधु जी साश्चर्य रहस्यभरी मुस्कान बिखेरते हुए बोले-श्रेष्ठि! मुझे तो आज एक ऐसा कोई भी व्यक्ति नहीं मिला, जिसे विधाता या स्वयं काल चक्र ने एक दिन में चौबीस घण्टे में एक पल भी कम समय दिया हो। फिर 'समय की कमी' से आपका क्या अभिप्राय है?

सेठ सकपकाकर चुप हो गया। सन्त ने स्पष्टीकरण करते हुए कहा-वत्स! जिसे आप समयाभाव कहते हो वह वस्तुत: समय की कमी नहीं, समय की अव्यवस्था है। अनुपयोगी कार्यों में अधिक समय व्यय हो जाने से उपयोगी कार्यों के लिए समय नहीं बचता इसलिए जरूरी है कार्य से पूर्व समय का मूल्यांकन करना सीखो। समय का मूल्यांकन अर्थात् समय का सम्यक् नियोजन, सम्यक् उपयोग, सदुपयोग। जो व्यक्ति समय का सम्यक् नियोजन करना जानता है, समय उससे विजित हो जाता है और उसकी इस विजयश्री पर वह स्वयं हर्षोन्मत्त हो आनन्द और यश पुञ्ज के गुलाबी/रक्त कुंकुम से उसका तिलक कर देता है। इसके विपरीत जो समय का सम्यक् नियोजन नहीं जानते, वे समय की मार से हार जाते हैं और कराहते फिरते हैं मेरे पास समय नहीं है। समय उसी का साथ देता है जो उसका हाथ पकड़कर चलता है। सेठ नतमस्तक हो गया।

जीवन की सबसे बड़ी जीत है समय का सदुपयोग और जीवन की सबसे बड़ी पराजय है समय का दुरुपयोग। उसे व्यर्थ गँवाना बहुत बड़ी सम्पत्ति खोना है। फ्रान्सीसी कहावत है 'सिवा दिन-रात के हर चीज खरीदी जा सकती है। सच है वक्त का एक निमिष स्वर्ण के हर तार की तरह कीमती है, सिर्फ इतना ही नहीं सन्त पुरुषों की भाषा में 'आने वाले दो कल एक आज के बराबर होते हैं और दस हजार गुजरे कल एक आज की बराबरी नहीं कर सकते, इसका कारण है बीता हुआ समय कभी लौटकर नहीं आता। नदी के प्रवाह की तरह समय को कभी कोई लौटा नहीं सका। समुद्र की ओर जाती गंगा को तो सबने देखा है किन्तु उसे लौटते हुए कभी किसी ने नहीं देखा। सच तो यह है बहती धारा में दो दफा कब-किसने नहाया है? मुँह से निकली बात, बीती रात, कमान से छूटा तीर, देह से निर्गत आत्मा, बीता बचपन, गुजरी जवानी, टूटे तारे, टूटी टहनी, झड़ते फल-फूल-पत्र कभी पुन: अपने उद्गम पर नहीं लौटते, तब 'समय' नामा चक्र आगे बढ़कर पीछे क्यों लौटेगा?

अतीत को वर्तमान बनाना न तो इन्सान के हाथ की बात है न इन्द्र, धरणेन्द्र, चक्रेन्द्र कहलाने वाले अमर-नराधिपों की; क्योंकि वह न तो किसी की खुशामद का मुँहताज है, न धन व मित्रताओं का। वह ऐसा निर्लिप्त न्यायाधीश है जो कोटि-कोटि स्वर्ण मुद्राओं की रिश्वत भी ठुकरा देता है। उसका कोई गुरु नही; जिसकी आज्ञा शिरोधार्य करने पर वह विवश हो। उसका कोई मालिक नहीं, जिसके दबाब में उसे लौटना पड़े, एतदर्थ अथर्ववेद में काल को विश्वेश्वर कहा है 'कालो हि सर्वस्येश्वर:।' किष्किन्धाकाण्ड में वाल्मीकि महात्मा फरमाते हैं-

न कालस्यास्ति बन्धुत्वं न हेतु र्न पराक्रमः।
न मित्रज्ञातिसम्बन्धः कारणं नात्मनो वशः॥

काल किसी के साथ बन्धुत्व, मित्रता अथवा जात-पाँत का रिश्ता नहीं निभाता। उसे अधीनस्थ करने का कोई उपाय भी नहीं है। उस पर किसी के पराक्रम का जोर नहीं चलता क्योंकि 'कारण स्वरूप काल' किसी के वश में नहीं है। यही बात गीता में भी कही है 'न कालस्य प्रिय: कश्चिन्न द्वेष्य: कुरुसत्तम।' हे कुरुत्तम! काल का न कोई प्रिय है, न ही द्वेषी।

गुप्तचरों के समान समय के चरण अश्रव्य और नि:शब्द हैं। चोर की भाँति चुपके से दबे पैर निकल जाने वाले इस शख्स का गति क्रम अनवरत साम्य है, उसमें कोई नव्य परिवर्तन, कोई नयापन नहीं है। वह मिश्री या लवण डली (प्रयोक्ता पर निर्भर) के समान सार्वकालिक, सर्वत्र, सर्वत: मधुर और क्षारधर्मी है। इसकी गति को पहचानने वाला 'समय के फलक' पर वे आदर्श चित्र प्रतिबिम्बित कर जाता है जिससे हजारों-लाखों पीढ़ियाँ कल्पान्त तक सबक लेती रहती हैं और जो समय की गति-कीमत नहीं पहचानते वे 'क्या करूँ समय ही नहीं मिलता' का रोना रोते-रोते

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तनावों के चक्रव्यूह में फँसकर ऐसी दर्दनाक, शर्मनाक मौत मरते हैं जिनकी स्मृति मात्र रूह को रोमांचित कर देती है।

जिन्हें समय न मिलने की शिकायत है स्पष्ट है उनका दैनिक जीवन अस्त-व्यस्त है। उन्हें प्रत्येक कार्य हेतु समय का सम्यक् नियोजन नहीं आता। वे कार्यों की समय सारिणी बदलते रहते हैं 'खाने के समय सोना, सोने के वक्त खाना आदि अजूबे उल्टे कार्यक्रम उनकी दिनचर्या में शामिल हो जाते हैं, फिर आत्म चिन्तन, भगवद्भक्ति, सामायिक, ध्यान, सत्संगति, प्रतिक्रमण, स्वाध्याय जैसे लोकदुर्लभ कार्य या तो छूट जाते हैं या उनका नियम है ही, तो उन्हें झटपट स्वल्पावधि में निपटा लिया जाता है। कल पर सरकने वालों को आगे सरका दिया जाता है अथवा एक-दूसरे आवश्यकों पर उन्हें अनावश्यक रूप से लाद दिया जाता है अर्थात् उनके साथ निपटा दिया जाता है।

मानव मन के हाथों में जिनका हित से कोई दूर-दूर तक ताल्लुक नहीं है, ऐसे कार्यों की एक लम्बी सूची (लिस्ट) सतत् लटकती रहती है, जिनकी सम्पूर्ति में आत्म चिन्तन, आत्म कल्याण जो कि जीव मात्र का ध्येय, श्रेय और प्रेय है; छूट जाता है। यहाँ तक कि उनका अमन चैन भी छिन जाता है। ऐसे लोग आलसी, आत्मविमुख, स्वधर्मानुत्साही, स्वयं को धोखा देने वाले एवं काम चोरों की श्रेणी में गिने जाते हैं। उचित समय पर उचित फल देने वाला अवसर उनके हाथों में पश्चात्ताप सौंपकर खिसक जाता है। उनका वह पश्चात्ताप वैसा ही व्यर्थ है जैसे सिर फूटने पर फौलादी टोप पहनना, पकड़े जाने पर चिड़िया का चीखना, बच्चे के डूब जाने पर कुँए को ढाँकना अथवा हाथी बेच डालने के बाद अंकुश रखने जैसा व्यर्थ है?

समय गँवाना अर्थात् जीवन की अमूल्य मूलभूत पूँजी खोना है। मनुष्य शरीर, थकान, दुकान, किटी-क्लब, सभा सोसाइटियों व अन्यान्य फिजूल कार्यों में कितना समय बर्बाद कर देता है, जबकि अपनी आत्म-जीवनोन्नति के लिए उसके पास वक्त नहीं है। दुनिया की चिन्ता के लिए उसके पास समय ही समय है और आत्म-चिन्तन के लिए समय के अभाव का रुदन गीत है। कितनी विचित्र विडम्बना है। 'इन्सा यह नहीं जानता जो समय चिन्ता में गया वह कूड़ेदान में गया और जो समय आत्मचिन्तन में गया वह तिजौरी में जमा हो गया है।'

समय की काया उतनी ही आयत है जितनी कि पहले थी, न घटी है न बढ़ी है, न घटेगी न बढ़ेगी चूँकि समय अनन्तपर्वायष्टि है, अस्तु 'समय मिलेगा तो....' के इन्तजार में खुशियों की पंखुरियाँ मत सुखाइए। समय नियोजन द्वारा समय निकालना सीखिये। परिस्थितियाँ और परिवेश कभी अनुकूल नहीं होते। उनके साथ समझौता करके अपने कर्त्तव्य को यथासमय अविलम्ब करने की कोशिश कीजिए। उचित समय पर किया गया कार्य उचित फल देता है और समय की सिकता पर उसकी विशिष्टता के अमिट चिह्न अंकित हो जाते हैं। 'अमिट आलेख' समय का सदुपयोग करने वाले पुरुषार्थियों ने ही समय के भाल पर लिखे हैं और जिन्होंने समय की उपेक्षा की है वे कष्टों की वैतरणी में डूबे हैं।

मेरा अपना मानना है कि हर कार्य के लिए एक समय और हर समय के लिए एक उपयोगी कार्य होना जरूरी है, ताकि समय के सदुपयोग के साथ जीवन में सुव्यवस्था और शान्ति स्थापित हो सके। एक नीतिकार कहता है-नृपते किं क्षणो मूर्खो दरिद्रः किं वराटकः-हे राजन्! 'क्षण भर का समय है ही क्या' (जीवन पड़ा है) यह समझने वाला मनुष्य मूर्ख हो जाता है, इसी प्रकार 'एक कोड़ी है ही क्या' ऐसा समझने वाला दरिद्र हो जाता है। इसलिए सन्त वाणी है, समय रूपी अमृत बहा जा रहा है सम्भव है प्यास बुझाने का अवसर तुम्हें फिर न मिले, अतः समय रहते बहते समय का सदुपयोग कर लीजिए। 'अभी नहीं तो कभी नहीं' ही समय का सम्यक् मूल्यांकन है। अंग्रेजी कहावत है The Spirit of the time teach me speed. समय की आत्मा को समझो वह तुम्हें चलना सिखा देगी। समय पर वही सवारी कर सकता है, जिसके कर्मठ हाथों में उसकी लगाम होती है।

समय में बहुत बड़ी ताकत हैं। नेपोलियन का सेनापति ग्रूसी युद्ध में केवल पाँच मिनट देर से पहुँचा, युद्ध का पासा पलट गया। नेपोलियन को पराजित होना पड़ा। कैकेयी ने वर माँगने का अवसर चुना तो उसका पुत्र राजा बन गया। 'अभी समय शेष है पार्थ! धनुष उठा' कृष्ण के इस समय बोध ने अर्जुन में उत्साह और प्राण फूँक दिये, परिणामतः जयद्रथवध हो गया। 'भीम! यही समय है दुर्योधन की जंघा तोड़' यह ललकार को सुनकर एक निमिष की भी देर न करते हुए भीम ने गदा प्रहार कर दुर्योधन को धराशायी कर दिया। 'पाण्डवों की महाभारतविजय' समय के सम्यक् सदुपयोग का प्रत्यक्ष उदाहरण है। सच है समय का सदुपयोग प्रगति का प्रशस्त लक्षण है, श्रेष्ठ जीवन का परिचायक पत्र है। शान्ति मय जीवन एवं अक्षय लक्ष्मी का अकूत भण्डार है। यह ऐसा वशीकरण मन्त्र है कि इसके अनुष्ठान से विघ्न बिलबिलाकर भागते नजर आते हैं। इसलिए तीन बातें याद रखकर समय की कीमत आँकना प्रारम्भ कर देना चाहिए।Remember that time is money and time is the great Physician and time is the great instructor.

याद रखो समय मनी (धन) है। समय एक महान चिकित्सक है, समय एक महान शिक्षक है।

'श्री गुप्तिसन्देश' जून 2002 से साभार

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आचार्यश्री ज्ञानसागरजी महाराज का व्यक्तित्व एवं कृतित्व

ब्र. शान्ति कुमार जैन

आचार्यश्री ज्ञानसागर जी महाराज गृहस्थ अवस्था के श्री भूरामलजी छाबड़ा का जन्म जयपुर एवं सीकर के बीच राणोली नगर में हुआ। व्यवसायी घराना में जन्म लेकर भी वे कभी भी अध्यवसाय में नहीं फँसे। उन्होंने सही व्यवसाय आत्म का कल्याण के मार्ग को ही चुना। विवाह किया नहीं। बड़े परिवार के थे। विद्याभ्यास बनारस में किया। अनेक संस्कृत साहित्य का सृजन भी किया। उनका भी छद्मनाम शान्ति कुमार था। हम भी उसी ग्राम के थे। मेरे पिताजी और वे आपस में परम मित्र थे। मेरा नामकरण भी उन्हीं का किया हुआ है।

धनोपार्जन का लोभ उन्हें जरा भी नहीं हुआ था। अत्यन्त गौर वर्ण के थे। ज्ञान का क्षयोपशम अपूर्व था। अपनी धुन के पक्के थे। उनका व्यक्तित्व अद्वितीय था। आचार्य वीरसागरजी महाराज एवं आचार्य शिवसागर जी महाराज के संघ में साधु, साध्वी, त्यागी, व्रती, ब्रह्मचारी, ब्रह्मचारिणियों को अध्ययन भी कराया करते थे।

आचार्य शिवसागर जी महाराज से मुनि दीक्षा वृद्धावस्था में ली थी। साधना तपस्या में कठोर थे। गुरु के आदेश से संघ से पृथक होकर चर्या करने लगे। चारित्र चक्रवर्ती आचार्य श्री शान्तिसागर जी की परम्परा का निर्दोष पालन करते थे। मुनि चर्या के लिए शिथिलाचार से समझौता कभी नहीं किया। उस समय की श्रमण परम्पराओं में सूर्य के समान सर्वदा दैदीप्यमान रहे।

उनका कृतित्व तो आज आचार्यश्री विद्यासागरजी महाराज के रूप में सर्वजन सुविदित है। खदान से निकले हुए पाषाण में कोहिनूर हीरे को देख पाना दैविक दृष्टि से ही सम्भव होता है। कर्नाटक से आए हुए एक युवा को तलाश कर तराशा और आचार्य विद्यासागर बनाकर गए। तराशने के कार्य में भी बहुत अल्प समय लगा। उस युवा बाल ब्रह्मचारी मुनि विद्यासागर पर इतना विश्वास था कि उनको अपने आचार्य पद से अभिषिक्त करके स्वयं सामान्य शिष्य बनकर सल्लेखना ग्रहण कर ली थी। समाज में उस वक्त भारी विरोध हुआ। पर आज उनके उस कृतित्व आचार्य श्री विद्यासागर जी को देखकर श्रद्धा से मस्तक नत हो जाता है आचार्य श्री विद्यासागर जी के इस अभूतपूर्व अद्वितीय अनुकरणीय कृतित्व के लिए। इतिहास में ऐसी मिसाल और कहीं नहीं मिलती।

उनकी समाधि पर भी अपने आप में निरतिचार, निर्दोष थीं। उसकी तुलना वर्तमान में एकमात्र चारित्र चक्रवर्ती आचार्य श्री शान्तिसागर जी की समाधि से ही की जा सकती है। राजस्थान की ज्येष्ठ माह की भीषण गर्मी में उन्होंने अपनी सल्लेखना निर्विघ्न सम्पन्न की थी जिसकी वैयावृत्ति आचार्य विद्यासागरजी ने ऐसी की कि आज समाधि सम्राट माने जाने लगे। अनेक समाधियाँ करा चुके हैं। आचार्य ज्ञानसागर जी महाराज श्रेष्ठतम व्यक्तित्व के धनी थे एवं उनका श्रेष्ठतम कृतित्व है आचार्य श्री विद्यासागर जी महाराज! महापुरुष पगडंडियाँ बनाकर चले जाते हैं, योग्य शिष्य उन्हें राजमार्ग बना देते हैं।

आचार्य श्री ज्ञानसागर जी महाराज ने मुनि दीक्षा के पश्चात् अपनी लेखनी से कोई लेख, पुस्तक ग्रंथ नहीं लिखे। उनकी सम्पूर्ण रचनाएँ मुनि दीक्षा के पूर्वकालवर्ती हैं।

(आचार्य श्री विद्यासागर संघस्थ)

आदिपुराण के सुभाषित

ताः संपदस्तदैश्वर्यं ते भोगा स परिच्छदः।
ये समं बन्धुभिर्भुक्ताः संविभक्तसुखोदयैः॥

भावार्थ : सम्पत्तियाँ वही हैं, ऐश्वर्य वही है, भोग वही है और सामग्री वही है जिसे भाई लोग सुख के उदय को बाँटते हुये साथ-साथ उपभोग करें।

अयं खलु खलाचारो यद्बलात्कारदर्शनम्।
स्वगुणोत्कीर्तनं दोषोद्भावनं च परेतु यत्॥

भावार्थ - अपनी जबरदस्ती दिखलाना वास्तव में दुष्टों का काम है तथा अपने गुणों का वर्णन करना और दूसरों में दोष प्रकट करना भी दुष्टों का काम हैं।

दीक्षा रक्षा गुणा भृत्या दयेयं प्राणवल्लभा।
इति ज्यायस्तपो राज्यमिदं श्लाध्यपरिच्छदम्॥

भावार्थ - जिसमें दीक्षा ही रक्षा करने वाली है, गुण ही सेवक हैं और दया ही प्राण प्यारी स्त्री है, इस प्रकार जिसकी सब सामग्री प्रशंसनीय है ऐसा यह तप रूपी राज्य ही उत्कृष्ट राज्य है।

वरं वनाधिवासोऽपि वरं प्राणविसर्जनम्।
कुलाभिमानिनः पुंसो न पराज्ञा विधेयता॥

भावार्थ - वन में निवास करना अच्छा है और प्राणों का त्याग देना अच्छा है, किन्तु अपने कुल का अभिमान रखने वाले पुरुष को दूसरे की आशा के अधीन रहना अच्छा नहीं है।

पं. सनतकुमार विनोद कुमार जैन, रजवाँस

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जिनदेव दर्शन की सार्थकता

डॉ. सुरेन्द्र कुमार जैन 'भारती'

संसार के सभी मनुष्य प्रातः उठकर सर्वप्रथम अपने इष्टदेव का स्मरण करते हैं, जिन्हें वे परमपिता परमेश्वर ब्रह्मा या ईश्वर कहते हैं। भारतवर्ष में मनुष्य अध्यात्म को जीवन का एक अनिवार्य कर्म मानता है। धर्म उसकी आत्मा में बसता है और क्रियाओं में दिखता है। वह उतना कानून से नहीं डरता जितना कि धर्म से डरता है। पुण्य में संलग्न मनुष्य पाप-कार्यों से निवृत्ति चाहता है। जैनधर्म में परमात्मा को 'जिन' संज्ञा प्राप्त है, क्योंकि इन्द्रियों को जीते बिना जिन संज्ञा प्राप्त नहीं होती। जिन बिम्ब के दर्शन प्रत्येक जैनी का प्रमुख कर्त्तव्य माना गया है। समाज में ऐसा व्यक्ति प्रतिष्ठा को प्राप्त होता है। राग-द्वेष से परे इन्द्रियजयी, हितोपदेशी, वीतरागी अरहन्त (सर्वज्ञ) भगवान की प्रशान्त मुद्रा युक्त छवि हमारे मन-मस्तिष्क में सदैव विद्यमान रहती है। संसार में सुख की चाह जिन्हें है वे प्रातः काल उठकर जिनदेवदर्शन करते हैं। आचार्य सकलकीर्ति ने पार्श्वनाथ चरित में लिखा है कि-''जिनेन्द्रभगवान के उत्तम बिम्ब आदि का दर्शन करने वाले धर्माभिलाषी भव्य जीवों के परिणाम तत्काल शुभ व श्रेष्ठ हो जाते हैं। जिनेन्द्र भगवान का सादृश्य रखने वाली महाप्रतिमाओं के दर्शन से साक्षात् जिनेन्द्र भगवान् का स्मरण होता है, निरन्तर उनका साक्षात् ध्यान होता है और उसके फलस्वरूप पापों का निरोध होता है। जिनबिम्ब में समता आदि गुण व कीर्ति, कान्ति व शान्ति तथा मुक्ति का साधनभूत स्थिर वज्रासन और नासाग्रदृष्टि देखी जाती है। इसी प्रकार धर्म के प्रवर्तक जिनेन्द्र भगवान् में ये सब गुण विद्यमान हैं। तीर्थंकर प्रतिमाओं के लक्षण देखने से उनकी भक्ति करने वाले पुरुषों को तीर्थंकर भगवान का परम निश्चय होता है इसलिये उन जैसे परिणाम होने से, उनका ध्यान व स्मरण आने से तथा उनका निश्चय होने से धर्मात्मा जनों को महान पुण्य होता है। जिस प्रकार अचेतन मणि, मन्त्र, औषधि आदि विष तथा रोगादिक को नष्ट करते हैं, उसी प्रकार अचेतन प्रतिमाएँ भी पूजा-भक्ति करने वाले पुरुषों के विष तथा रोगादिक (जन्म-मरण के रोग) को नष्ट करती हैं।

ऐसी महनीय प्रभावशाली जिनभक्ति कही गयी है। लोकमर्यादा है कि-

रिक्तपाणिर्न पश्येत् राजानं देवतां गुरुम्।
नैमित्तिकविशेषेण फलेन फलमादिशेत्॥

अर्थात् राजा, गुरु और देव के समक्ष खाली हाथ कभी नहीं जाना चाहिये। निमित्त-नैमित्तिक तथा द्रव्य की विशेषता से फल में भी विशेषता आती है। हमारे यहाँ जिनदेव के समक्ष चढ़ाये जाने वाले द्रव्यों में भी संसारमुक्ति की कामना समाहित है। द्रव्य चढ़ाते समय व्यक्ति/पूजक यही भावना भाता है। जल चढ़ाते समय जन्म-जरा-मृत्यु के नाश, चंदन चढ़ाते समय संसार के ताप के नाश, अक्षत (चावल) चढ़ाते समय अक्षय पद (मोक्ष) प्राप्ति, पुष्प चढ़ाते समय काम भावना के नाश, नैवेद्य चढ़ाते समय क्षुधा नाश, दीप चढ़ाते समय अज्ञान नाश, धूप चढ़ाते समय अष्ट कर्मों के नाश और फल चढ़ाते समय मोक्ष फल प्राप्ति की भावना रखते हुए, मोक्षपद प्राप्ति की कामना करता है। जो सही साधक है, पूजक है उसे संसार-स्वर्ग के सुख नहीं, बल्कि मोक्षसुख की ही प्रबल और एकमात्र चाह रहती है। उसकी सब क्रियाएँ, भावनाएँ आत्मा से आत्मा के लिये होती हैं, शरीर को तो वह मात्र साधक मानता है।

देवदर्शन का फल देवदर्शन की प्रक्रिया से ही प्रारम्भ हो जाता है। आचार्य रविषेण ने पद्मपुराण में लिखा है कि ''जो मनुष्य जिनप्रतिमा के दर्शन का चिन्तवन करता है वह बेला का, जो उद्यम का अभिलाषी होता है वह तेला का, जो जाना प्रारम्भ करता है वह चौला का, जो जाने लगता है वह पाँच उपवास का, जो कुछ दूर पहुँच जाता है वह बारह उपवास का, जो बीच में पहुँच जाता है वह पन्द्रह उपवास का, जो मन्दिर के दर्शन करता है वह मासोपवास का, जो मन्दिर के आँगन में प्रवेश करता है वह छह मासोपवास का, जो द्वार में प्रवेश करता है वह वर्षोपवास का, जो प्रदक्षिणा देता है वह शत वर्षोपवास का, जो जिनेन्द्रदेव के मुख का दर्शन करता है वह सहस्र वर्षोपवास का और जो स्वभाव से स्तुति करता है वह अनन्त उपवास का फल प्राप्त करता है। वास्तव में जिनेन्द्रभक्ति से बढ़कर उत्तम पुण्य नहीं है। जिनभक्ति से कर्मक्षय को प्राप्त हो जाते हैं और जिसके कर्म क्षीण हो जाते हैं वह अनुपम सुख से सम्पन्न परम-पद को प्राप्त होता है।''

जब हम जिनबिम्ब का दर्शन करते हैं तब हमें रागी और वीतरागी, शरीर और आत्मा का भेद ज्ञात होता है। कवि कहता है कि भक्त और भगवान में बस यही तो अन्तर है कि हम संसार में दुःखी हैं और वे शरीर छोड़कर परमात्म पद को प्राप्त हो चुके हैं-

तुममें हममें भेद यह और भेद कछु नाँहिं।
तुम तन तज परब्रह्म भये हम दुखिया जगमाँहिं॥

स्वयं के शरीर में विद्यमान आत्मा को नहीं पहचानना अविद्या है और स्वयं की चैतन्य आत्मा को पहचानना विद्या है। अध्यात्म रामायण में आया है कि-

देहोऽहमिति या बुद्धिरविद्या सा प्रकीर्तिता ।
नाहं देहश्चिदात्मेति बुद्धिर्विद्येति भण्यते ॥

अर्थात् ''मैं शरीर हूँ '' इस प्रकार शरीर में एकत्वबुद्धि

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अविद्या कही गयी है, किन्तु 'मैं शरीर नहीं हूँ, चैतन्यमय आत्मा हूँ' यह बुद्धि विद्या है। इस विद्या के बल पर ही व्यक्ति अपने इष्ट को पा लेता है। आचार्य अकलंकदेव कहते हैं कि-

त्रैलोक्यं सकलं त्रिकालविषयं सालोकमालोकितम्।
साक्षात् येन यथा स्वयं करतले रेखात्रयं सांगुलि॥
रागद्वेषभयामयान्तकजरालोलत्वलोभादयो,
नालं कल्पदलंघनाय स महादेवो मया विद्यते॥

अर्थात- जो त्रिकालवर्ती लोक तथा अलोक के समस्त पदार्थों का हस्तगत अंगुलियों तथा रेखाओं के समान साक्षात् अवलोकन करते हैं तथा राग-द्वेष, भय, व्याधि, मृत्यु, जरा, चंचलता, लोभ आदि विकारों से विमुक्त हैं, उन महादेव-महान देव की मैं वन्दना करता हूँ।

जिनभक्ति कर्मक्षय के लिए होती है। संसार के दु:खों के बीच शान्ति का अमोघ उपाय जिनभक्ति है। इससे चिरसंचित पापों का क्षय होता है और चिरसंचित अभिलाषाओं की पूर्ति सहज ही हो जाती है। जिनेन्द्रदेव के दर्शन से नेत्र सफल हो जाते हैं, आत्मा परिष्कृत होती है और हृदय परम सन्तोष का अनुभव करता है। दर्शनपाठ में हम पढ़ते हैं-

अद्याभवत्सफलता नयनद्वयस्य,
देव त्वदीय चरणाम्बुज वीक्षणेन।
अद्य त्रिलोकतिलक प्रतिभासते मे,
संसारवारिधिरयं चुलुकप्रमाणम्॥

यह दिन हमारे जीवन में बार-बार आये; ऐसी मंगल कामना है।

एल 65, न्यू इन्दिरा नगर,
ए बुरहानपुर (म.प्र.)

एलोरा (महाराष्ट्र) में विशाल आर्यिका संघ का चातुर्मास

महाराष्ट्र की प्रसिद्ध ऐतिहासिक एवं पुरातात्त्विक लघुनगरी एलोरा में श्री पार्श्वनाथ ब्रह्मचर्याश्रम गुरुकुल के विशाल परिसर में दिनांक 25.7.2002 को विश्वविख्यात यशस्वी सन्त परमपूज्य आचार्य श्री विद्यासागर जी की सुयोग्य शिष्याओं पूजनीय आर्यिका श्री अनन्तमति जी एवं आर्यिका श्री आदर्शमति जी का अपने-अपने संघ के साथ चातुर्मास का शुभारम्भ मंगल कलश की स्थापना के साथ हुआ। दोनों आर्यिका संघों में सब मिलाकर तीस आर्यिका माताएँ विराजमान हैं। अनेक ब्रह्मचारिणी बहनें भी हैं। इनके अतिरिक्त परमपूज्य आचार्यश्री विद्यासागर जी से आजीवन ब्रह्मचर्यव्रत ग्रहण करने वाली प्रतिभामंडल की 70 बहनें भी पूजनीया आर्यिका श्री आदर्शमति माताजी के अनुशासन में संस्कृत साहित्य का उच्च अध्ययन करने के लिए पधारी हैं। इन्हें अध्ययन कराने के लिए आचार्यश्री के आदेश से भोपालनिवासी प्रो. पं. रतनचन्द्र जी का भी आगमन हुआ है।

महाराष्ट्रवासियों को इतने विशाल संघ का चातुर्मास देखने का पहली बार सौभाग्य प्राप्त हुआ है। चातुर्मास स्थापना का कार्यक्रम दि. 25.7.2002 को अपराह्न 2 बजे से प्रारंभ हुआ। इस दिन वीरशासन जयन्ती भी थी। अत: प्रतिभामंडल की बहनों के शिक्षण का शुभारंभ भी इसी दिन किया गया।

सर्वप्रथम प्रतिभामंडल की ब्रह्माचारिणी बहनों ने मंगलाचरण किया। तत्पश्चात् मुम्बई निवासी श्री नरेश जी जैन के द्वारा आचार्य श्री विद्यासागर जी के चित्र का अनावरण तथा श्री जयसुखभाई चार्टर्ड एकाउण्टेण्ट मुंबई द्वारा दीप प्रज्वलन किया गया। संस्था के अध्यक्ष श्री तनसुखलाल जी ठोलिया ने प्रो. रतनचन्द्र जी का तथा डॉ. सौ. सरला पाटनी, प्राक्तन जिला परिषद् सदस्या ने उनकी धर्मपत्नी सौ. चमेलीदेवी जैन का स्वागत किया। आदरणीया ब्रह्मचारिणी सुषमा दीदी ने अपना मनोगत व्यक्त करते हुए संस्था के कार्यों की सराहना की।

संस्था सचिव 'शिक्षण महर्षि' श्री पन्नालाल जी गंगवाल ने अपने प्रास्ताविक में संकल्प किया कि आर्यिकासंघ का चातुर्मास व्यवस्थित रूप से सम्पन्न कराया जायेगा। उन्होंने बताया कि सम्पूर्ण कमेटी एवं डॉ. प्रेमचन्द्र जी पाटनी एलोरा चातुर्मास व्यवस्था के मुख्य कार्यवाह हैं।

आर्यिका माताओं को शास्त्रदान की पहली बोली श्री विजय कुमार जी महेन्द्रकर ने 11000 रु. में तथा दूसरी बोली श्री झुंबर लाल जी पाटनी ने 12000 रु. में ली। चातुर्मास मंगलकलश की बोली गुरुदेव समन्तभद्र विद्यालय के प्रधानाध्यापक के सुपुत्रद्वय श्री निशान्त कुमार एवं स्वप्निल कुमार ठोलिया ने 51000 रु. में ली। प्रतिभामंडल के ज्ञानसागरकलश की बोली 35000 रु. में श्री सन्दीपकुमार जी, सचिन कुमार जी एवं श्री शान्तिलाल जी अजमेरा कला-अध्यापक एलोरा के द्वारा ली गई। अन्त में पूजनीया आर्यिका श्री अनंतमति जी का मंगल सम्बोधन हुआ। कार्यक्रम का संचालन श्री निर्मलकुमार जी एवं श्री गुलाबचन्द्र जी जैन (बोरालकर) ने किया। इस दिन का भण्डारा संस्था सदस्य श्री शान्ति नाथ जी गोसावी द्वारा दिया गया।

एन.सी. ठोलिया, मुख्याध्यापक
गुरुदेव समन्तभद्र विद्यामन्दिर,
एलोरा (महाराष्ट्र)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जैन विश्वविद्यालय:क्यों और कैसे?

डॉ. कुमार अनेकान्त जैन, व्याख्याता

किसी भी धर्म, दर्शन और संस्कृति के उत्थान में निम्न दो घटक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। पहला है उस धर्म, दर्शन और संस्कृति का पालन-पोषण तथा अनुकरण करने वाला समाज और दूसरा घटक जिसकी भूमिका काफी महत्त्वपूर्ण है, वह है- उस धर्म, दर्शन और संस्कृति का साहित्य और उसके ज्ञाता। जैन विद्या, संस्कृति और उसके विशाल साहित्य में सुदीर्घ परम्परा जैन संस्कृति की अनमोल धरोहर है। जैन साहित्य की, यह विशेषता है कि उसका प्रणयन करने वालों में लगभग सभी सांसारिक मोहमाया से दूर वनों में वास करने वाले संयमी एवं तपस्वी संत ही रहे। गृहस्थ धर्म में रहकर साहित्य संवर्द्धन करने वाले श्रावक विद्वानों ने भी उत्तरकाल में इसी भूमिका का निवर्तन बड़ी निष्ठा पूर्वक किया।

जैन शिक्षा का इतिहास

तीर्थंकर महावीर के निर्वाण के बाद से जब पूरे भारतवर्ष में धार्मिक, आध्यात्मिक और दार्शनिक क्षेत्रों में परस्पर संवाद एवं प्रतियोगिता जैसा वातावरण बना हुआ था, उस समय तीन सौ वैसठ मतावलम्बी इस क्षेत्र में अपना वर्चस्व बनाये हुए थे। उस समय प्रत्येक धर्म के आचार्य और प्रवर्तक अपेक्षाकृत बहुत तीव्रता से देश की नदियों, पर्वतों, तीर्थों, पूजा-स्थलों, वृक्षों, वायु, जल,पृथ्वी, अग्नि, आकाश इत्यादि प्राकृतिक तत्त्वों पर अपना-अपना धार्मिक आधिपत्य स्थापित करने हेतु प्रयत्नशील थे, तब इन दूरद्रष्टा जैनाचार्यों ने, चाहे वे दिगम्बर रहे हों अथवा श्वेताम्बर, सभी ने अपने-अपने क्षेत्रों में अपनी-अपनी प्रतिभानुसार विद्याओं की हर विधा के लिए एक विशाल साहित्य का संवर्द्धन करके संसार की प्रत्येक ज्ञान-विज्ञान की शाखाओं को अपने-अपने योगदानों से भर दिया। जैन साधु आध्यात्मिक, अनेकान्तवादी, अहिंसक, अपरिग्रही और ज्ञान-ध्यान तपोरत: में विश्वास करने वाले थे। उनकी रुचि निवृत्ति प्रधान थी। वे आत्मरसिया थे, फिर भी वे वैसे वातावरण में भी जैन सिद्धान्त, संस्कृति, साहित्य और समाज को अधिक श्रेष्ठ प्रभावनायुक्त एवं गौरवशाली सिद्ध करने की प्रवृत्ति का लोभ संवरण नहीं कर पाते थे।

हमारी तथा अन्य परम्पराओं की स्थिति

उन दिनों वैदिक संस्कृति का प्रभाव प्रवृत्तिपरक और पूरी तरह लौकिक होने के कारण जनमानस को आन्दोलित और प्रभावित किये हुए था। बौद्ध आचार्य अपनी पूरी शक्ति से उसका मुकाबला कर रहे थे, तभी इस मुकाबले में वे इतने अधिक निखरे और विकसित हुए कि वैदिक परम्परा के आचार्यों को भी उनका खण्डन करने में बहुत श्रम व समय लगाना पड़ा। वैदिक परम्परा के पास बुद्धिजीवियों की एक लम्बी कतार थी। वहाँ धुरन्धर गृहस्थ पण्डित विद्वान् भी अधिक संख्या में थे तथा मंत्रदृष्टा साधु, सन्यासी, ऋषि भी। आज भी यही स्थिति है। हमारे जैनाचार्यों को तीर्थंकरों की सर्वज्ञता पर पूरा विश्वास था, किन्तु वे संख्या में अपेक्षाकृत कम थे। उनके श्रावकों में विद्वान् कम, किन्तु सम्पन्नों की संख्या अधिक थी। इन्हीं को साथ लेकर उन्हें जैन धर्म की पताका लहरानी थी। ये संपन्न गृहस्थ भी विभिन्न क्षेत्रों में फैले होने के कारण लोकधर्म से बहुत जल्दी प्रभावित हो जाया करते थे। जैनाचार्यों के समक्ष इन्हीं लोगों के साथ, इन्हीं संसाधनों का उपयोग करते हुए सिद्धान्त और संस्कृति को सुरक्षित रखने का उपाय खोजना था। अत: उन्होंने वैसा मार्ग खोजा भी।

हमारी प्रारम्भिक नीति

जैनाचार्यों ने स्थिति को भाँपते हुए अध्ययन-अध्यापन तथा शास्त्रलेखन की बागडोर स्वयं संभाली। इससे उन्हें दो लाभ थे, एक इससे उनका मोक्षमार्ग प्रशस्त होता था और दूसरा गृहस्थों को मार्गदर्शन मिलता था। गृहस्थों की सम्पन्नता का उपयोग तीर्थ निमाण की प्रेरणा देकर किया, जिसके फलस्वरूप धर्म भावनाओं से ओत-प्रोत श्रद्धालु मूर्तियाँ तथा उनकी प्रतिष्ठा हेतु मन्दिर बनवाने लगे। इस फैसले का सबसे अधिक सार्थक परिणाम यह आया कि भारत में ही नहीं, वरन् विश्व के अनेक क्षेत्रों से आज भी खुदायी में मिल रही जैनमूर्तियों, मंदिरों के अवशेषों आदिके साक्षात् प्रत्यक्ष-प्रमाण निरन्तर प्राप्त होने के कारण, जैनों से ईर्ष्या करने वाले विद्वान् भी जैन संस्कृति की प्राचीनता को नकार नही पाये।

हमारा योगदान

जैनाचार्यों ने ज्ञान-विज्ञान के क्षेत्र में काँटे की टक्कर ली। धर्म, दर्शन, अध्यात्म, गणित, भूगोल, खगोल, ज्योतिष, वास्तुकला, आयुर्वेद, तन्त्र-मन्त्र, भाषा, काव्य, चित्रकला,संगीतकला इत्यादि अनेक विषयों पर उच्चकोटि के सहस्त्रों शास्त्रों को रचकर जैनेतर आचार्यों एवं विद्वानों को भी विस्मय में डाल दिया। इन विषयों में इनकी उपलब्धि इतनी अधिक मौलिक, खोजपूर्ण व गंभीर थी कि जैनेतर आचार्य भी आश्चर्यचकित हो उठे। उनकी खण्डन वाली तलवार भी इनको काट नहीं पाती थी और हमारी अनेकान्तात्मक, अहिंसात्मक, विनम्र और गम्भीर प्रस्तुति की मामूली सी सिलाई करने वाली सुई भी उन्हें चुभती थी।

हमारी दशा

जैनाचार्य पूरी ताकत से लगे रहे। ज्ञान-विज्ञान की विविधताओं से साहित्य समृद्ध करते रहे, भोला समाज श्रद्धावशात् उस विरासत को सुरक्षित रखने की कोशिश करता रहा, किन्तु कहीं हमारी नादानी हमें मार गयी तो कहीं अज्ञता। विरोधियों ने हमारे शास्त्रों की होलियाँ जलायी। हमारे सामने आचार्यों एवं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

साधुओं की श्रुति-परम्परा के आधार पर ज्ञान को सुरक्षित रखने का विकल्प नहीं था। समाज में विद्वान् कम, वणिक अधिक थे। बौद्ध इस मुकाबले में लाभ ले गये। उन्होंने राज्याश्रय प्राप्त किया और देश के विभिन्न क्षेत्रों में कई विश्वविद्यालय स्थापित किये और सम्पूर्ण विश्व पर हावी हो गये। वैदिक समाज अपनी समर्पित पण्डित परम्परा और राज्याश्रय के बल पर, अपनी शास्त्रीय विद्वत्ता, कर्मकाण्ड और पूजनपाठ के बल पर चमत्कार दिखलाते रहे और जन-समुदाय को अपनी ओर प्रभावित करते रहे। हम बहुत पीछे रह गये। हमारे आचार्यों ने जो शास्त्र रचे हम उन्हें बचा तक नहीं पाये, जो बचा पाये, उसे पढ़-लिख नहीं पाये और उसके महत्त्व को भी नहीं समझ पाये। हम खुद नहीं समझ पाये, इसलिए दुनिया को नहीं समझा पाये। इसलिए आज हमसे हमारी पहचान पूछी जा रही है। हमें आज कोर्ट में सिद्ध करना पड़ता है कि हम अन्य नहीं, अपितु जैन हैं। हम अपने समृद्ध इतिहास और वैभव से अनजान होने के कारण उसी प्रकार रो रहे हैं, जिस प्रकार बचपन में मेले में खो जाने के बाद करोड़पति बाप का लड़का रिक्शा खींचते हुए रोता है। क्योंकि उस लड़के को उस समय यह पता नहीं है कि वह किसका पुत्र है? यह स्थिति हमारी है।

आशा की किरण

अनेक संघर्षों, उत्थान-पतन के बाद जाकर एक आशा की किरण जागी। कुछ जागरूक नेतृत्व के कारण समाज में काफी शास्त्रीय पण्डित हो गये। ये भी श्रद्धावशात् आचार्यों भगवन्तों द्वारा रचित शास्त्रों को जीवन्त करने का काम करने लगे। कुछ ने समाज को जागृत किया, कुछ ने जैनेतर विद्वानों के समक्ष जैन सिद्धान्तों, संस्कृति और समृद्ध साहित्य को अच्छे ढंग से प्रस्तुत किया। वर्तमान युग में जैनाचार्य, साधु और श्रावक भी इस दिशा में गतिशील हुए हैं। उन्होंने जैन शास्त्रों के अध्ययन-अध्यापन-अनुसन्धान-अनुवाद तथा सम्पादन के महत्त्व को पहचाना और आज अपने-अपने स्तर पर सभी इसे आगे बढ़ाने में लगे हैं। जैन ग्रन्थों की अस्मिता सुरक्षित करने में जहाँ एक तरफ जैनेतर विद्वानों की उपेक्षणीय दृष्टि झेलनी पड़ी वहीं दूसरी ओर ऐसे अनेक विद्या-प्रेमी ब्राह्मणों के वे ऋणी हैं, जिन्होंने जैन शास्त्रों के संवर्द्धन व सम्पादन में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया।

कुछ बात है कि हस्ती मिटती नहीं हमारी

मूल भारतीय संस्कृति में पली-पुसी जैन संस्कृति ने जनमानस पर भरपूर प्रभाव डाला और अपनी जड़ें मजबूत कीं। वैदिक स्वर के साथ स्वर न मिलाने के कारण जैनों को सदा सत्ता और बहुबलों की कोप दृष्टि भी झेलनी पड़ी और आज भी झेलनी पड़ रही है। सरकार द्वारा जैन परम्परागत अध्ययन-अध्यापन तथा शोध पर कभी कोई लम्बे कार्य नहीं किये गये और न ही उनके लिए अनुदान दिये गये। मुसलमानों के मदरसों के लिए भरपूर सरकारी अनुदान मिलते हैं, बौद्धों के शोधसंस्थान और विश्वविद्यालय भी सरकारी अनुदान से चल रहे हैं और वैदिक ज्ञान-विज्ञान का अधिकांश अभ्युदय अब भी सरकारी अनुदानों से करवाया जा रहा है।

दिगम्बर परम्परा की मान्यतानुसार श्रुत परम्परा छिन्न-भिन्न हो गयी। मात्र कुछ अंश शेष बचे हैं। श्वेताम्बर परम्परा ने इसे स्मृति में सुरक्षित रखने का दावा किया और विशाल आगम साहित्य खड़ा कर दिया। इतना ही नहीं श्वेताम्बर तेरापंथ के युगप्रधान आचार्य तुलसी ने एक ऐतिहासिक भूल को सुधारने का प्रयास किया। लाडनूं (राज.) में जैन विश्व भारती विश्वविद्यालय की स्थापना करके विश्व का प्रथम जैन विश्वविद्यालय खड़ा कर दिया। समाचार पत्रों से ज्ञात हुआ कि भगवान् महावीर के 2600वें जन्म महोत्सव के उपलक्ष्य में बिहार सरकार ने भगवान महावीर विश्वविद्यालय बनाने की घोषणा की है। वह कब खुलेगा? यह कह नहीं सकते किन्तु उसकी रूपरेखा कैसे होनी चाहिए, यह विचारणीय बिन्दु है।

श्रुत रक्षा हेतु प्रयास

बीसवीं सदी के प्रारम्भ में जैन विद्या के पठन-पाठन को सुरक्षित रखने के लिए हमारे समाज के कर्णधारों ने जैन विद्यालयों का शुभारम्भ किया। मध्यमा, शास्त्री, आचार्य की कक्षाओं में परम्परागत शास्त्रीय विषय पढ़ाकर विद्वत् पीढ़ियाँ तैयार हुईं। कुछ विश्वविद्यालयों तक में जैनदर्शन एवं प्राकृत विभाग खोले गये। जैन चेयर स्थापित की गईं। इन सभी प्रयासों से जैन संस्कृति के दर्शन-पक्ष का स्वरूप तो यत्किंचित निखरा और काफी कार्य हुआ, किन्तु फिर भी जैन संस्कृति के अन्य महत्त्वपूर्ण विषय एवं पक्ष बिल्कुल उपेक्षित रह गये, जिनका अध्ययन-अध्यापन और अनुसन्धान कार्य बहुत आवश्यक था। इनके बिना समग्र विद्या का कार्य अधूरा है। इन सभी पक्षों की पूर्ति हेतु स्वतंत्र जैन विश्वविद्यालय बहुत आवश्यक है।

जैन विश्वविद्यालय की परिकल्पना

आज जगह-जगह जैन विश्वविद्यालय बनाने की चर्चाएँ सुनता हूँ, किन्तु जैन विश्वविद्यालय कैसा होना चाहिए,इसका कोई निश्चित स्वरूप अभी तक देखने में नहीं आया। जैन नाम से तो विश्वविद्यालय स्थापित हो सकते हैं, किन्तु वहाँ भी यदि व्यावसायिक या लौकिक शिक्षा के पाठ्यक्रम ही लागू रहें, तो नाममात्र से ही क्या फायदा ?

हमारे मन में ऐसे ही विश्वविद्यालय की परिकल्पना बहुत दिनों से बार-बार बनती रही है, जो अन्तर्राष्ट्रीय स्तर की गुणवत्ता को बनाते हुए पूर्ण रूप से जैन संस्कृति मात्र के प्रति समर्पित हो। किसी भी विश्वविद्यालय में एकमात्र जैनदर्शन एवं प्राकृत विभाग चलाने से संपूर्ण संस्कृति का संवर्द्धन संभव नहीं, समग्रता जैनधर्म के विभिन्न उपेक्षित महत्त्वपूर्ण विषयों के अध्ययन में होगी। एक पूर्णत: स्वायत्तशासी तथा सरकार द्वारा अनुदानित जैन विश्वविद्यालय देश के किसी बड़े शहर में स्थापित होना चाहिए। यह विश्वविद्यालय कोई धर्म प्रचार का केन्द्र न बनकर मात्र शैक्षणिक रूपरेखा वाला

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

केन्द्र बने और सरकारी अनुदान से इसलिए कि जैनधर्म दर्शन, संस्कृति एवं साहित्य भी हमारे देश की गरिमा है। अत: वैदिक, बौद्ध, मुस्लिम शिक्षण संस्थानों की तरह हमें भी इनके संवर्द्धन,संरक्षण हेतु सरकार से आर्थिक अनुदान का उतना ही अधिकार है जितना अन्यों को। हमारे समाज का टैक्स आदि के रूप में सरकारी खजाने भरने में सर्वाधिक योगदान भी है।

अत: सही ढंग से चलाया जाय तो विशिष्ट अनुसंधान तथा अध्ययन के उद्देश्य को लेकर चलने वाला यह जैन विश्वविद्यालय नये कीर्तिमान स्थापित कर सकता है। विश्वविद्यालय और पारम्परिक महाविद्यालयों, पाठशालाओं में मौलिक अन्तर यही होता है कि विश्वविद्यालय पूजन, पाठ, विधान और प्रवचन आदि के ट्रेनिंग केन्द्र नहीं हैं। इसलिए यह हो सकता है कि समाज को इस विश्वविद्यालय से सीधा-सीधा विशेष लाभ न दिखे, प्रकारान्तर से यह समाज का ऐतिहासिक सच्चा सेवक सिद्ध हो सकता है। यदि हम अन्तर्राष्ट्रीय शैक्षणिक स्तर पर जैन संस्कृति की कोई स्थिति प्राप्त करना चाहते हैं, तो हमें अवश्य ही छोटे-छोटे लाभ के लोभ का संवरण करना ही पड़ेगा,क्योंकि इस प्रकार के अन्य स्त्रोत बहुत हैं। सुप्रसिद्ध खिलाड़ी सचिन तेन्दुलकर से यह अपेक्षा नहीं की जानी चाहिए कि वह हमारे लिए तभी उपयोगी होगा जब वह हमारे गली-मुहल्ले में होने वाले खेलों में भी भाग ले।

विभागों का वर्गीकरण

जैन विश्वविद्यालय संचालित करने में जो प्रमुख उद्देश्य है वह है-'अध्ययन-अध्यापन-अनुसंधान-अनुवाद और सम्पादन'। इस दृष्टि से जैन विश्वविद्यालयों में निम्नलिखित विभागों का वर्गीकरण होना चाहिए-

1. प्रथमानुयोग विभाग- इस विभाग में 63 शलाका पुरुषों के चरित के आधार पर रचित पुराणों,कथा ग्रन्थों तथा उनमें वर्णित कथाओं और उपदेशों का अध्ययन व अनुसन्धान हो। कथानुयोग के समस्त ग्रन्थों का इस विभाग में अध्ययन-अध्यापन कराया जाय। उस पर शोध कार्य हों। हस्तलिखित पाण्डुलिपियों का सम्पादन एवं प्रकाशन हो।

2. करणानुयोग विभाग - यह विभाग एक संकाय के रूप में भी कार्य कर सकता है। जिसके अन्तर्गत कई विभाग अलग-अलग विषयों पर कार्य कर सकते हैं। जैसे-

क) जैन गणित विभाग- इस विभाग में गणित की उत्पत्ति से लेकर आज तक की गणित में जैन गणितज्ञों द्वारा रचित शास्त्रों को क्रमबद्ध पाठ्यक्रम बनाकर उसका अध्ययन-अनुसन्धान किया जाय। जैन गणित के चमत्कारों को दुनिया के समक्ष रखा जाय। वैदिक गणित व आधुनिक गणित से जैन गणित का तुलनात्मक अध्ययन हो। अप्रकाशित प्राचीन ग्रन्थों का सम्पादन व प्रकाशन हो।

ख) जैन भूगोल विभाग- इस विभाग में जैन भूगोल का शास्त्रीय व वैज्ञानिक तुलनात्मक अनुसन्धान व अध्ययन हो अप्रकाशित ग्रंथों का सम्पादन व प्रकाशन हो।

ग) जैन खगोल विभाग - इस विभाग में जैन दृष्टि से तथा अन्य धर्मों से तुलना करते हुए अध्ययन, अनुसन्धान हो तथ अप्रकाशित पाण्डुलिपियों को एकत्रित कर उसका संपादन व प्रकाशन कार्य हो।

घ) जैन ज्योतिष विभाग- इस विभाग में जैन ज्योतिष की तथा अन्य परम्परा की ज्योतिष विद्या से तुलनात्मक अध्ययन हो। ज्योतिष, हस्तरेखाविज्ञान, निमित्त-ज्ञान, सामुद्रिक शास्त्र इत्यादि विषयों पर इस विभाग के अन्तर्गत अध्ययन-अध्यापन व अनुसन्धान हों।

3. चरणानुयोग विभाग- इस विभाग में श्रावक एवं श्रमण के आचारपरक शास्त्रों का अध्ययन-अध्यापन हो। इसका सभी छोटी-बड़ी कक्षाओं के अनुरूप सुव्यवस्थित पाठ्यक्रम तैयार किया जाय। ग्रन्थों पर शोधकार्य हो। प्राचीन अप्रकाशित पाण्डुलिपियों को खोजा जाय, उनका सम्पादन व प्रकाशन हो।

4. जैन द्रव्यानुयोग विभाग- इस विभाग में भी दो उपविभाग होंगे। पहला अध्यात्म शास्त्र विभाग और दूसरा न्यायशास्त्र विभाग। इनसे सम्बन्धित प्रमुख शास्त्रों को व्यवस्थित पाठ्यक्रम बनाकर इस विभाग में पढ़ाया जाय तथा इस दृष्टि से अध्ययन-अध्यापन व अनुसन्धान कार्य भी कराया जाय। अन्य परम्पराओं के शास्त्रों से तुलनात्मक अध्ययन भी किया जाए।

5. जैन इतिहास, कला एवं पुरातत्त्व विभाग- इस विभाग में जैन इतिहास को एक नये सिरे से नये खोजे गये प्रामाणिक तथ्यों के आधार पर लिखा जाय, उसका अध्ययन अनुसंधान हो। लिपि विज्ञान, मूर्तिकला, वास्तुकला, चित्रकला इत्यादि विषयों पर अध्ययन हो तथा तत्सम्बन्धित अप्रकाशित ग्रन्थों का प्रकाशन हो। जैन पुरातत्त्व के साक्ष्यों को इस विभाग में एकत्रित किया जाय। जैन इतिहास के तथ्यों को दुराग्रहवश तोड़मरोड़कर विश्व में किसी के द्वारा यदि कहीं भी प्रस्तुत किया जाय, तो उसको यहाँ से समाधान मिले। सिंधु घाटी सभ्यता, मोहनजोदड़ो, हड़प्पा संस्कृति, विभिन्न प्राचीन शिलालेखों इत्यादि का पुन: अध्ययन हो। इसी विभाग के अन्तर्गत एक व्यवस्थित विशाल जैन पुरातत्त्व संग्रहालय भी विश्वविद्यालय में स्थापित किया जाय।

6. जैन संगीत एवं नृत्यकला विभाग-इस विभाग में इस बात का प्रशिक्षण व अनुसन्धान हो कि संगीत एवं नृत्य जगत् के लिए जैन संस्कृति का क्या अवदान रहा? इन विषयों से सम्बन्धित शास्त्रों का अध्ययन, सम्पादन व प्रकाशन हो।

7. प्राकृत भाषा एवं साहित्य विभाग-इस विभाग में सभी प्राकृत भाषाओं एवं उनके साहित्य का सुव्यवस्थित रूप में अध्यापन होगा। यहाँ प्राकृत व्याकरण साहित्य के सभी पहलुओं पर विचार-विमर्श व अनुसन्धान अपेक्षित है।

8. अपभ्रंश भाषा विभाग- इस विभाग में भी भाषा एवं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उसके साहित्य का अध्ययन व अध्यापन हो तथा अनुसन्धान किया जाये।

9. जैन योग विभाग-यह विभाग जैन परम्परा द्वारा प्रतिपादित योग एवं ध्यान पद्धतियों का प्रायोगिक व सैद्धान्तिक अध्ययन करेगा। नये युग में योग की भूमिकाओं का ध्यान करते हुए उसे आधुनिक सन्दर्भों में प्रस्तुत करेगा। अन्य सभी योग पद्धतियों के साथ तुलनात्मक अध्ययन होगा। यहाँ योग व ध्यान से सम्बन्धित पाण्डुलिपियों, ग्रंथों व अनुसन्धानों का सम्पादन व प्रकाशन अपेक्षित है।

10. जैन विद्या एवं आधुनिक विज्ञान विभाग-इस विभाग में जैन सिद्धान्तों का आधुनिक विज्ञान में योगदान व संभावनाओं पर अध्ययन, अनुसन्धान होगा। नयी-नयी पुस्तकें लिखी जायेंगी, जिसमें आधुनिक विज्ञान व सिद्धान्तों का तुलनात्मक विश्लेषण होगा।

11. जैन विधि-विधान विभाग- यह विभाग जैनधर्म की सभी परम्पराओं की पूजन पद्धतियों, विधि-विधानों के स्वरूपों, प्रतिष्ठाओं तथा अन्य सभी संस्कारों एवं क्रिया-काण्डों की शास्त्रीयता व वैज्ञानिकता का अध्ययन, अनुसन्धान करेगा। अप्रकाशित ग्रंथों का प्रकाशन करेगा।

12. आयुर्वेद चिकित्सा विभाग- यह जानकारी बहुत कम लोगों को है कि प्राकृतिक चिकित्सा, शुद्ध जड़ी-बूटी द्वारा औषधि निर्माण आदि कार्य, जिन्हें आयुर्वेद के अन्तर्गत गिना जाता है, इस विषय के अनेक शास्त्र जैनाचार्यों द्वारा रचे गये। आयुर्वेद के क्षेत्र के विशेषज्ञ इस विभाग से इस ज्ञान राशि पर अनुसन्धान, अध्यापन व अध्ययन करेंगे। यह विभाग एक प्रयोगशाला व एक रसायनशाला एवं चिकित्सालय भी स्थापित करेगा जिसमें जनसामान्य अपना इलाज भी करवा सकेंगे।

13. अनुवाद विभाग-इस विभाग में सभी प्रमुख जैन शास्त्रों का अंग्रेजी सहित संसार की कई भाषाओं में अनुवाद करवाया जायेगा।

14. प्रकाशन विभाग- यह विभाग सभी विभागों के अनुसन्धान व सम्पादन को प्रकाशित करेगा। एक शोध प्रत्रिका भी इसी विभाग से प्रकाशित होगी।

इनके अतिरिक्त अन्य विभाग भी आवश्यकतानुसार संभव हो सकते हैं, जिनकी जानकारी जैन विद्या के विशेषज्ञों से प्राप्त की जा सकती है। यह विश्वविद्यालय वास्तव में महत्त्वपूर्ण उच्च शिक्षा का एक विशिष्ट केन्द्र होगा। स्नातकोत्तर कक्षाओं से एवं जवाहर लाल नेहरु विश्वविद्यालय, नई दिल्ली की तरह व्यापक अनुसन्धान कार्यों के लिए स्थापित यह विश्वविद्यालय अपने आप में अद्वितीय होगा। जिन्होंने काशी हिन्दू विश्वविद्यालय जैसे विश्व के अद्वितीय विश्वविद्यालय की स्थापना की ऐसे पण्डित मदन मोहन मालवीय जी कोई सेठ नहीं थे, न ही कोई साधु, वे एक संकल्पी, आत्मविश्वासी विद्वान् व कर्मठ पुरुष थे। अपनी भावनाओं से न जाने क्या-क्या विपत्तियाँ एवं अपमान सहकर इसकी स्थापना की। आज यह विश्वविद्यालय पूरे विश्व में विख्यात है। देखना यह है कि अपना जैन समाज विश्वविद्यालय की स्थापना करके समाज के इतिहास की एक बहुत बड़ी कमी की पूर्ति क्या कर पायेगा? क्या कोई नया इतिहास रचा जायेगा? बहुत से लोगों के मन में ये बाते हैं। कितनों ने प्रयास भी किये, बैरिस्टर चम्पत राय जी ने अब से सत्तर वर्ष पूर्व इसकी कल्पना की थी। किन्तु उन सब की आशाएँ अब तक हम पूरी नहीं कर पाए। हम अपने आपसी विवादों, कटुताओं, मनमुटाव, स्वार्थवादिताओं पदलोलुपताओं, नेतागिरी एवं आडम्बर-युक्त क्रियाकाण्डों में रहकर अपनी बहुमूल्य शक्ति व्यर्थ खर्च करते रहे। इसीलिए हम अब तक इस दिशा में सफल नहीं हुए। हम नाकाम भले ही रहे हों, किन्तु नाउम्मीद नहीं हैं। यह स्वप्न कभी-न-कभी यथार्थ में परिणत होकर रहेगा ऐसा हमें अब भी दृढ़ विश्वास है। क्योंकि-

''दिल ना उम्मीद तो नहीं नाकाम ही तो है।
लम्बी है ग़म की शाम मगर शाम ही तो है॥''

जैनदर्शन विभाग, दर्शन संकाय,
लालबहादुर शास्त्री, राष्ट्रीय विद्यापीठ,
(मान्य विश्वद्यिालय), नई दिल्ली-16

साधर्मी वात्सल्य केन्द्र

आचार्य विद्यासागर जी महाराज की प्रेरणा से धार्मिक प्रवृत्ति के साधर्मी भाई-बहिनों की सहायता करने की योजना बनाई है जिसमें बेरोजगारों को नौकरी दिलाना एवं रोजगार में मदद करना, बीमार व्यक्तियों को औषधि आदि दिलवाना, अपंगों को साईकिल आदि दिलवाना तथा पैर आदि लगवाना, गरीब महिलाओं को गृहस्थी चलाने हेतु सिलाई मशीन आदि दिलवाना, पोलियो आदि से पीड़ितों का आपरेशन आदि कराना आदि-आदि। तथा और जो भी सहायता कर सकेंगे उसे करने का प्रयास करेंगे। यह सहायता केवल उन्हीं लोगों को मिलेगी जो सच्चे देव-शास्त्र-गुरु का श्रद्धान, प्रतिदिन देव-दर्शन करने का, रात्रि भोजन (अन्न) का त्याग तथा सप्त व्यसन त्याग करने का नियम लेंगे।

इच्छुक भाई-बहिन निम्न पते पर अपने प्रार्थना-पत्र भेज सकते हैं।

साधर्मी वात्सल्य केन्द्र
5911/8, स्वदेशी मार्केट, सदर बाजार, दिल्ली-6
3671644-3631318

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अनदेखा सच

कविता-नितिन सोनी

युवा दम्पती नितिन-कविता सोनी ने अपने अनुभवों के आधार पर होटलों के शाकाहारी चरित्रों के दूसरे पहलू को अपनी लेखनी से उजागर किया है। शाकाहारी एवं मांसाहारी दोनों आहारों की व्यवस्था वाले होटल विज्ञापन तो इस बात का करते हैं कि उनके यहाँ शाकाहार की पृथक व्यवस्था है, किन्तु उनकी कथनी और करनी का अंतर शाकाहारियों को कमोवेश मांसाहार भी कराता रहता है और वे इस भ्रम में बने रहते हैं कि वे जो खा रहे हैं, वह शुद्ध शाकाहार है। लेखक ने स्पष्ट किया है कि दोनों आहार वाले होटलों में शाकाहार की मर्यादा व्यावहारिक रूप से संभव ही नहीं है। लेखक ने इस लोक प्रचलित विश्वास को ध्वस्त करने का पूर्ण प्रयास किया है कि दोनों शैलियों के भोजन वाले स्थानों पर दोनों शैलियाँ एक-दूसरे से दूरी बनाए रखती हैं और शाकाहारी ग्राहक को शुद्ध शाकाहार मिलता है। खानसामा की विवशताएँ, बर्तनों की सीमाएँ और दोनों प्रकार के आहारों में समान रूप से खाई जाने वाली/उपयोग में आने वाली सामग्री में होने वाले तालमेल के कारण विशुद्ध शाकाहार ऐसी होटलों में असंभव है। निश्चित ही यह तथ्य ज्ञानवर्द्धक ही नहीं, आँखें खोलने वाला भी है।

जहाँ तक मेरा अनुभव है,ऐसे होटलों में कट्टर शाकाहारी व्यक्ति आहार करते ही नहीं हैं। वे शाकाहारी ही वहाँ जाते हैं, जो कट्टर नहीं हैं और जो शाकाहार की औपचारिकता निभाना भर पर्याप्त समझते हैं। अंततः होटलें एक व्यवसाय है, धर्मानुशासन नहीं। मांसाहार का व्यवसाय करने वाले से यह अपेक्षा रखना कि वह शाकाहारियों की भावनाओं से खेल नहीं करेगा, जरूरत से ज्यादा भोलापन ही कहा जाएगा। लेखक की सराहना की जानी चाहिए कि उसने उन तथ्यों को सबके सामने रखा है, जिनके बारे में या तो शाकाहारी अनभिज्ञ पाए जाते हैं या अनदेखा करते रहते हैं।

प्रो. डॉ. सरोजकुमार, इन्दौर

यह किताब जो कि मेरे निजी अनुभवों के आधार पर लिखी गई है, समर्पित है मेरे स्वर्गीय पिताश्री रमेशचन्द्र जी सोनी एवं स्वर्गीय माताजी श्रीमती सुमन सोनी को।

इस किताब को पूर्ण करने में, इसके लेखन में, इसकी परिकल्पना में, पूरा-पूरा सहयोग दिया मेरी पत्नी श्रीमती कविता सोनी ने, जिनके बिना यह कार्य कभी संभव नहीं था।

मैंने पिछले एक साल ऐसे रेस्टॉरेंट में प्रबंधन का कार्य संभाला, जहाँ पर शाकाहारी एवं मांसाहारी दोनों तरह का खाना बनता है। अपनी आँखों के सामने ऐसा प्रदूषित वातावरण देखना एक ऐसा पीड़ाजनक अनुभव है जिसे शब्दों में बयां करना बहुत ही कठिन है।

मैं स्वयं अपने को दोषी मानता हूँ, हिस्सा मानता हूँ, ऐसे नारकीय वातावरण में कार्य करने के लिए। परन्तु कभी-कभी पारिवारिक जिम्मेदारियाँ ऐसे काम करने को विवश कर देती हैं।

मुझे अपने इस अनुभव को आप तक पहुँचाना इसलिए जरूरी लगा, क्योंकि वे लोग जो ऐसे रेस्टॉरेंट में खाना खाते हैं और सोचते हैं कि वे पूर्णतः शाकाहारी भोजन ही ग्रहण कर रहे हैं, तो वे पूर्णतः गलत हैं।

आइए अब आपको एक ऐसे ही शाकाहारी+मांसाहारी रेस्टॉरेंट के रसोईघर यानि किचन की झलक दिखलाते हैं:

सर्वप्रथम तो परिचित करवाते हैं किचन की बनावट से जो सामान्यतः सभी रेस्टॉरेन्ट में तीन भागों में बँटी रहती है:

1. तन्दूर सेक्शन, 2.इन्डियन सेक्शन, 3. चायनीज् सेक्शन

तन्दूर सेक्शन

यहाँ पर शाकाहारी एवं मांसाहारी यानि वेज एवं नानवेज तन्दूरी भोजन सामग्री तैयार होती है।

- तन्दूरी रोटी के साथ नान का आटा भी लगाया जाता है, जिसमें खमीर उठाने के लिए और नर्म व सुस्वादु बनाने के लिए अंडे का इस्तेमाल किया जाता है।
- जो टेबल तंदूर उस्ताद के पास होती है वह एक ही होती है, जिस पर रोटी का आटा व नानवेज के सारे आयटम एक साथ रखे रहते हैं।
- जब तंदूरी मुर्गा या अन्य मांसाहारी तन्दूरी आइटम बनाना होता है तो पहले उस पर मक्खन व तेल का मिश्रण लगाया जाता है। इसके लिए एक डब्बे में तेल व मक्खन का मिश्रण भरा होता है तथा एक लकड़ी पर कपड़ा बाँधकर मिश्रण में डाल देते हैं, जिसके द्वारा वह मिश्रण तन्दूरी मुर्गे पर लगाया जाता है तथा उसी लकड़ी व उसी मिश्रण का शाकाहारी लोगों की रोटी/नान पर भी उपयोग किया जाता है।
- किसी भी तन्दूरी डिश जैसे पनीर टिक्का, पनीर पुदीना टिक्का, वेज सीक कबाब को तैयार करने के लिए पहले टिक्का व कबाब बनाये जाते हैं, जिन्हें लोहे की सलाखों में लगाकर तन्दूर में डाला जाता है।

यहाँ ध्यान देने योग्य यह है कि इन्हीं लोहे की सलाखों का उपयोग मांसाहारी व्यंजन जैसे तन्दूरी मुर्गा, चिकन टिक्का,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तन्दूरी फिश इत्यादि के लिए भी किया जाता है तथा चाहे आर्डर वेज का हो या नानवेज का इन सलाखों को कभी धोया नहीं जाता है।

● इन सिके हुए, मक्खन लगे तन्दूरी व्यंजनों पर मसाला लगाया जाता है, जो एक बड़े बर्तन में रखा होता है तथा इसी में चाहे शाकाहारी हो या मांसाहारी व्यंजन दोनों को लपेट-लपेट कर मसाला लगाया जाता है।

इन्डियन सेक्शन

यह रसोई का वह हिस्सा है जहाँ पर सभी सब्जियाँ व दालें बनती हैं। यहाँ पर एक-दो भट्टियाँ व दो टेबलें पास-पास रखी होती हैं।

टेबल पर सारा कच्चा माल जैसे मावा, पनीर, दूध, दही, क्रीम रखा होता है। उसी टेबल पर मांसाहारी खाने की कच्ची सामग्री जैसे अंडे, मछली, चिकन रखा होता है।

भट्टी के यहीं पास ही सारे मसाले रखे होते हैं। अब यदि कोई भी आर्डर आता है, चाहे वह शाकाहारी हो या मांसाहारी, कुक (रसोइया) उसको बनाते समय एक ही फ्रायपान व चम्मच का इस्तेमाल करता है।

उदाहरण के लिए बटर चिकन का आर्डर है, तो कुक पहले अपनी बड़ी चम्मच से फ्राईपान में घी डालेगा, फिर फ्राईपान में चिकन डालकर उसी चम्मच से हिलाएगा फिर उसी चम्मच से क्रीम, काजूपेस्ट या कोई भी मसाले, जो लेने हैं, लेते हैं, फिर बनी ग्रेवी, जो हर सब्जी या नानवेज के लिए इकट्ठी बनती है, उसी चम्मच से लेते हैं। बटर चिकन बनने के बाद, फ्राईपान तो धुलता है पर चम्मच वहीं पास रखे पानी भरे तपेलों में डाले देते हैं।

किसी दाल को पतला करना हो या ग्रेवी में पानी मिलाना हो तो इसी तपेले का पानी मिलाया जाता है जिसमें हर तरह की वेज-नानवेज लगी चम्मच डालते हैं।

चायनीज् सेक्शन

चायनीज् सेक्शन बनाने के लिए भी मुख्यत: दो भट्टियाँ लगी होती हैं, एवं साइड टेबल कच्चा माल रखने के लिए होती है।

यदि आप स्प्रिंग रोल खा रहे हैं तो उसको चिपकाने के लिए अण्डे की जर्दी का उपयोग होता है।

चिली पनीर के घोल व मंचुरियन के पकोड़ों में भी अण्डे का इस्तेमाल होता है।

सूप में कोई भी ग्रेवी की चीज बनाने में जो पानी इस्तेमाल होता है वह चिकन स्टाक होता है।

(चिकन को उबालकर उसका जो पानी बचता है उसे चिकन स्टाक कहते हैं)

तलने के लिए एक ही कढ़ाई होती है जिसमें शाकाहारी जैसे पापड़, चिप्स व मांसाहारी जैसे मछली, चिकन दोनों ही तले जाते हैं।

सब्जी काटने के लिए लकड़ी के पटियों को काम में लाया जाता है। उन्हीं पटियों पर रखकर जो चाकू सब्जी काटने के काम में आते हैं उन्हीं से मटन-चिकन काटा जाता है और इन चाकुओं व पटियों को कभी धोया भी नहीं जाता है।

डीप फ्रीज जो प्रिजर्वेशन के लिए होता है उसमें वेज-नानवेज दोनों रखे जाते हैं।

तंदूर पर उस्ताद जिन हाथों से चिकन काटते हैं, रोटी का आर्डर आने पर बिना हाथ धोए, रोटी भी बना देते हैं।

स्टील की एक बड़ी टेबल जिस पर कटा हुआ चिकन, मटन रखते हैं, उसी पर वक्त आने पर चावल भी बनाकर ठंडा करने के लिए फैलाये जाते हैं, जिसमें कई बार खून व मांस भी मिल जाता है।

फ्रूट सलाद जिसका नानवेज् से कोई सम्बन्ध नहीं होना चाहिए, उसे भी टेस्टी बनाने के लिए अंडा फेंटकर मिलाते हैं।

रविवार या छुट्टी के दिनों में या पार्टी होने पर जब भीड़ अत्यधिक होती है तब किचन की सफाई, स्वच्छता पर ध्यान न देते हुए ग्राहक को आर्डर समय पर लगाने पर ध्यान होता है। ऐसे समय में किचन को देखना नर्क की अनुभूति करने के समान है क्योंकि हर स्थान पर नानवेज के अवशेष भरे पड़े रहते हैं।

ऐसे समय कई बार ग्राहकों को गलतफहमी में वेज की जगह नानवेज डिश भी लग जाती है।

पानी की शुद्धता भी प्रमाणित नहीं होती है क्योंकि वह टंकियों में एकत्रित होता है जिसकी साफ-सफाई महीनों नहीं होती है।

स्टाफ के सदस्यों के अनुभव के आधार पर यह निष्कर्ष सामने आता है कि चाहे छोटा-सा रेस्टॉरैन्ट हो या बड़ा होटल, वेज-नानवेज साथ-साथ बनता है, तो वहाँ इसी प्रकार कार्य होता है।

देखा जाए तो गलत वे लोग नहीं हैं, जो ऐसे प्रतिष्ठानों के मालिक हैं या उनमें कार्यरत हैं, क्योंकि वे लोग अधिकांशतया मांसाहारी ही होते हैं, इसलिए उन सबके लिए एक पूर्ण शाकाहारी की भावना समझाना कठिन कार्य है।

साथ ही किचन-स्टॉफ का कहना है कि बगैर अण्डा या चिकन स्टाक मिलाए कोई व्यंजन बनाते हैं, तो ग्राहक को वह स्वाद ही नहीं आता, जिसकी आदत उसे वर्षों से पड़ी हुई है।

अंत में, मैं केवल इतना ही कहना चाहूँगा कि यह किताब केवल उन लोगों की जानकारी के लिए है जो कि अज्ञानतावश ऐसे रेस्टॉरैंट में खाना खाते हैं।

और उन लोगों के लिए भी जो कुछ सच्चाई जानते तो हैं, पर हाई सोसायटी व पाश्चात्यता का नकाब ओढ़ने के कारण यह सब अनेदखा कर देते हैं। यदि इस लेख को पढ़कर एक भी पाठक ऐसे रेस्टॉरैन्ट (जहां शाकाहार एवं मांसाहार दोनों मिलते हैं) में भोजन करना बंद कर देता है, तो मेरा लेख लिखने का उद्देश्य सफल हो जाएगा।

'अनदेखा सच' से साभार

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जिज्ञासा-समाधान

पं. रतनलाल बैनाड़ा

जिज्ञासा-सबसे उपकारी इंद्रिय कौन है?

समाधान- श्लोकवार्तिक में इस प्रकार कहा है-सभी इन्द्रियों की अपेक्षा श्रोत्र इंद्रिय इस जीव को बहुत उपकारी है। कानों से उपदेश को सुनकर अनेक जीव हित की प्राप्ति और अहित का परिहार कर लेते हैं, उत्कृष्ट ज्ञानी या तत्त्वज्ञानी बनना कानों से ही साध्य है। सभी मोक्षगामी जीव कानों से उपदेश सुनकर देशनालब्धि द्वारा साक्षात् या परंपरा से मुक्ति लाभ करते हैं। जीव को विशेषज्ञ बनाने वाली श्रोत्र इन्द्रिय ही है। यदि कोई कहे कि रसना इन्द्रिय भी तो उपदेश करके बहुत उपकारी हो रही है। स्वर्ग या मोक्ष के उपयोगी पदों का उच्चारण करना, अध्ययन करना, जाप देना आदि रसना इन्द्रिय से ही होता है। उसका उत्तर है कि पहले श्रोत्र इन्द्रिय से सुनकर एवं विषय पर निर्णय करके उपदेश दिया जाता है। अत: रसना तो श्रोत्र के आधीन हुई। यदि कोई पुन: शंका करे कि सर्वज्ञ के तो श्रोत्र की परतंत्रता का अभाव होते हुए उपदेश होता है। उसको कहते हैं कि सर्वज्ञ दिव्यध्वनि रूप प्रवचन में रसना इंद्रिय का व्यापार नहीं है। तीर्थंकर प्रकृति के उदय से और भव्यों के भाग्यवशात् भगवान् के सर्व अंगों से मेघ गर्जन के समान दिव्यध्वनि होती है। अत: इस प्रवचन में रसना का व्यापार है ही नहीं। अत: जीव की परम हितकारी श्रोत्र इन्द्रिय ही है।

शंकाकार-पं. देवेन्द्र कुमार सागर

जिज्ञासा -श्री ह्री आदि देवियाँ भवनवासी हैं या व्यंतर जाति की हैं?

समाधान -श्री ह्री आदि देवियाँ व्यंतर जाति की देवियाँ हैं। प्रमाण इस प्रकार हैं-

1. तिलोयपण्णत्ति अधिकार-4 में इस प्रकार कहा है-

तद्दह-पउमस्सोवरि, पासादे चेट्ठदे य धिदिदेवी।
बहु-परिवारेहिं जुदा, णिरुवम-लावण्ण-संपुण्णा॥ 1785॥
इगि-पल्ल-पमाणाऊ, णाणाविह-रयण-भूसिय-सरीरा।
अइरम्मा बेंतरिया, सोहम्मिंदस्स सा देवी॥ 1786॥

अर्थ-उस द्रह संबंधी कमल के ऊपर स्थित भवन में बहुत परिवार से संयुक्त और अनुपम लावण्य धृतिदेवी निवास करती है॥ 1785॥

अर्थ- एक पल्य आयु की धारक और नाना प्रकार के रत्नों से विभूषित शरीर वाली अति रमणीय यह व्यन्तरिणी सौधर्मेन्द्र की देवकुमारी (आज्ञाकारिणी) है॥ 1786॥

2. श्री उत्तरपुराण पृष्ठ 188 पर इस प्रकार कहा है:

तेषामाद्येषु षट्सु स्युस्ता: श्री ह्री धृति कीर्तय:।
बुद्धिलक्ष्मीश्च शक्रस्य व्यन्तर्यो वल्लभाङ्गना:॥ 200॥

अर्थ- इनमें से आदि के छह ह्रदों में क्रम से श्री, ह्री, धृति, कीर्ति, बुद्धि और लक्ष्मी ये इन्द्र की वल्लभा व्यन्तर देवियाँ रहती हैं॥ 200॥

3. पं. माणिकचन्द्र जी कौन्देय ने तत्वार्थश्लोक वार्तिक के पंचम खण्ड के अध्याय-3 के सूत्र-20 ''तन्-निवासिन्यो.....'' की हिन्दी टीका में श्री आदि देवियाँ व्यंतर जाति की देवियाँ तथा ये सब ब्रह्मचारिणी हैं ऐसा लिखा है।

उपर्युक्त प्रमाणों से स्पष्ट है कि श्री,ह्री,धृति आदि देवियाँ व्यंतर जाति की हैं, भवनवासी नहीं।

जिज्ञासा- क्या समुद्घात काल में केवली भगवान् के मन-वचन-काय के क्रियारूप योग से होने वाले आस्रव पाया जाता है?

समाधान- उपर्युक्त जिज्ञासा के समाधान में श्री राजवार्तिकाकार ने अध्याय 6/2 की टीका में इस प्रकार कहा है-

प्रश्न-दंडादि योग में आस्रवत्व मानने में क्या दोष है? उत्तर-यद्यपि केवलीसमुद्घात अवस्था में सूक्ष्म योग मानकर तन्निमित्तक अल्पबंध माना जाता है, परन्तु एक सूत्र बनाने से तो केवलीसमुद्घात में साधारण योगत्व और बहुबन्ध का प्रसंग आने से विपरीतता आती है। वस्तुत: तो वर्गणानिमित्तक आत्मप्रदेश-परिस्पन्दन रूप मुख्य योग ही आस्रव कहा जाता है, परन्तु केवलीसमुद्घात अवस्था में होने वाले दंड, कपाट, प्रतर और लोकपूरण, योग वर्गणा अवलम्बन रूप नहीं हैं, अत: इससे आस्रव नहीं होता अर्थात् दंडाधि योग में आस्रव नहीं माना है।

प्रतिशंका-वर्गणालम्बन रूप योग नहीं होने से दंडाधि व्यापार काल में अनास्रव होने से दंडादि योगनिमित्तकबंध नहीं होना चाहिए परन्तु केवलीसमुद्घात अवस्था में बंध तो माना है?

उत्तर-यद्यपि केवलीसमुद्घात में वर्गणा अवलम्बन न होने से दंडादि योगनिमित्तक बंध नहीं है तथापि कायवर्गणा निमित्तक आत्मप्रदेशों में परिस्पन्दन है अत: सूक्ष्म काययोगनिमित्तक बंध केवलीसमुद्घात अवस्था में भी बंध है।

2. श्री श्लोकवार्तिककार ने तत्त्वार्थसूत्र अध्याय-6 के दूसरे सूत्र की टीका में इस प्रकार कहा है- स आस्रव: इत्यवधारणात् केवलिसमुद्घातकाले दंडकमाटप्रतरलोकपूरणकाययोगस्यास्त्रवत्वत्यवच्देछद:। कायादिवर्गणालंबनस्यैवयोगस्यास्त्रवत्ववचनात्। तस्य तदनालंबनत्वात्। कथमेवं च केवलिन: समुद्घातकाले सद्वेधबंध: स्यादिति चेत्, कायवर्गणानिमित्तात्मप्रदेशपरिस्पन्दस्य-तन्निमित्तस्य भावात्स इति प्रत्येयं।

अर्थ- स आस्रव:। इस प्रकार अवधारण करने से केवली के समुद्घात काल में दंड, कपाट, प्रतर, लोकपूरण अवस्थाओं के

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

काययोग को आस्रवपन से रहित कर दिया है, क्योंकि काय आदि तीन प्रकार की वर्गणाओं का आलम्बन ले रहे ही योग को आस्रव कहा है और वह योग दंड आदि अवस्थाओं में उन वर्गणाओं का आलम्बन नहीं करता। तो फिर केवलियों के समुद्घात काल में साता वेदनीय का बंध किस प्रकार होता है? गृहीत हो चुकी कायवर्गणा को निमित्त पाकर आत्मप्रदेशों के परिस्पंदन का वहाँ सद्भाव है जो कि उस बंध का निमित्त है।

भावार्थ- केवली समुद्घात के योग को आस्रव नहीं कहा जा सकता है, क्योंकि वहाँ काय-वचन और मन का अवलम्बन पाकर आत्मा का प्रदेश प्रतिस्पंद नहीं हुआ है।

जिज्ञासा-साधु संघ के चार भेद बताइये?

समाधान-स्वामिकार्तिकेयानुप्रेक्षा (अगास प्रकाशन) गाथा-391 की टीका में पृष्ठ 290 पर इस प्रकार कहा है-

साधु संघ चार प्रकार का होता है-1. सामान्य साधुओं को अनगार कहते हैं। 2. उपशम अथवा क्षपक श्रेणी पर आरूढ़ साधुओं को यति कहते हैं। 3. अवधिज्ञानी, मन:पर्ययज्ञानी और केवलज्ञानी साधुओं को मुनि कहते हैं। 4.ऋद्धिधारी साधुओं को ऋषि कहते हैं। ऋषियों के भी चार भेद बताए हैं। 1. विक्रिया और अक्षीणऋद्धि के धारियों को राजऋषि कहते हैं। 2. बुद्धि और औषधि ऋद्धिधारियों को ब्रह्मऋषि कहते हैं। 3. आकाशगामिनी ऋद्धिधारकों को देवऋषि कहते हैं। 4. केवलज्ञान महान् ऋद्धि के धारकों को परमऋषि कहते हैं।

जिज्ञासा- ढाई द्वीप में कितने म्लेच्छ खण्ड हैं?

समाधान- जम्बूद्वीप के भरत और ऐरावत क्षेत्र में 5-5 म्लेच्छ खण्ड हैं। ढाई द्वीप में कुल 5 भरत और 5 ऐरावत क्षेत्र हैं, एक क्षेत्र संबंधी 5 म्लेच्छ खण्ड लेने से सम्पूर्ण भरत और ऐरावत क्षेत्रों के 10×5=50 म्लेच्छ खण्ड हुए।

ढाई द्वीप में कुल 5 विदेह हैं। अर्थात् जम्बूद्वीप में एक विदेह, धातकीखण्ड में 2 तथा पुष्करार्ध में 2=5 विदेह हुए। प्रत्येक विदेह में 32-32 नगरियाँ हुईं। प्रत्येक नगरी की रचना भरत क्षेत्र के समान है अर्थात् प्रत्येक नगरी में एक आर्य खण्ड और 5 म्लेच्छ खण्ड हैं। इस प्रकार 5 विदेह क्षेत्रों की 160 नगरियों में 160×5=800 म्लेच्छ खण्ड हुए। इनमें भरत, ऐरावत क्षेत्र के 50 म्लेच्छ खण्ड मिलाने पर पूरे ढाई द्वीप में सम्पूर्ण खण्डों की संख्या 850 होती है।

शंकाकार- डॉ. रमेश जैन, खनियांधाना

जिज्ञासा- आजकल कुछ लोग दीपक से आरती करने एवं मंदिर जी में धूप खेने का विरोध करने लगे हैं। क्या वास्तव में दीपक से आरती करना, धूप खेना आगम विरुद्ध है या आगम सम्मत, स्पष्ट करें।

समाधान-वर्तमान में एक ऐसी नवीन धारा चल पड़ी है जो दीपक से आरती करना एवं धूप खेना आदि का विरोध करती है, जबकि शास्त्रों में आरती करना एवं धूप खेने के स्पष्ट बहुश: प्रमाण मिलते हैं। यहाँ कुछ प्रमाण दे रहे हैं:-

1. श्री सावयधम्म दोहा (रचयिता-आ.देवसेन, श्रावकाचार संग्रह भाग-1, सोलापुर से प्रकाशित) की गाथा नं. 189,196 में इस प्रकार कहा है:-

धूवउ खेवइं जिणवरहं तसु पसरइ सोहग्ग।
इत्थु म कायउ भंति करि तें पडिवद्धउ सग्गु॥ 189॥

अर्थ- जो जिनवर के आगे धूप खेता है, उसका सौभाग्य फैलता है और उसने स्वर्ग को बाँध लिया, इसमें कुछ भी भ्राँति मत कर॥ 189॥

आरत्तिउ दिण्णउ जिणहं उज्जोयइ सम्मत्तु।
भुवणुब्भासइ सुरगिरिहिं सुरु पयाहिण दिंतु॥ 196॥

अर्थ-जो जिनदेव की आरती करता है, उसके सम्यक्त्व का उद्योत होता है। सुरगिरि (सुमेरु) की प्रदक्षिणा देता हुआ सूर्य समस्त भुवन को प्रकाशित करता है॥196॥

2. श्री प्रश्नोत्तर श्रावकाचार (रचयिता-आ.श्री सकलकीर्ति, श्रावकाचार संग्रह भाग-2, सोलापुर प्रकाशन। पृष्ठ 379, श्लोक नं. 201, 202 में इस प्रकार कहा है:-

अभ्यर्चयन्ति ये दीपैः सत्कर्पूरघृतादिजैः
अर्हन्तं केवलज्ञानं ते भजन्ते सुदृष्टयः ॥ 201॥

अर्थ-जो सम्यग्दृष्टि पुरुष कपूर और घी के बने हुए दीपक से भगवान् की पूजा करते हैं, वे केवलज्ञान को अवश्य प्राप्त करते हैं॥ 201॥

चन्दनागुरु कर्पूरसद्द्रव्यादि दहन्ति ये।
जिनाग्रे कर्मकाष्ठानों भस्मी भावं श्रयन्ति ते॥ 202॥

अर्थ- जो भव्य भगवान् के सामने चन्दन, अगुरु, कपूर आदि श्रेष्ठ द्रव्यों को दहन करते हैं, इनकी धूप बनाकर खेते हैं वे कर्मरूपी ईंधन को भस्म कर डालते हैं॥ 202॥

चन्द्रोपकमहाघण्टाचामरध्वजदीपकान् ।
झल्लरी ताल कंसाल भृङारकलशादिकान्॥ 174॥
दत्वा चान्यानि साराणि धर्मोपकरणानि वै।
अर्जयन्ति बुधा धर्म धर्माधारे जिनालये ॥ 175॥

अर्थ- विद्वान लोग धर्म के आधारभूत जिनभवन में चन्दोवा, घण्टा, चमर,दीपक, झल्लरी, ताल, कंसाल,भृङार कलश, आदि उत्तम-उत्तम धर्मोपकरण देकर महापुण्य सम्पादन करते हैं॥ 174-5॥

उपरोक्त ग्रंथ में लिखा है कि विद्वान् लोग मंदिर में दीपक लेकर महान् पुण्य का संचय करते हैं। दीपक का प्रयोग आरती के अलावा अन्य किसी कार्य में नहीं होता, फिर आरती का निषेध कैसे हो सकता है।

3. श्री वसुनन्दि श्रावकाचार में गाथा नं. 436 से 439, पेज नं. 469 पर लिखा है:

दीवेहिं णियपहोहामियक्क तेएहिधूमरहिएहिं,
मंद चलमंदाणिलवसेण णच्चत अच्चीहिं ॥ 436॥
घणपडल कम्मणिवहव्व दूर मवसारियंधयारेहिं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जिणचरणकमलपुरओ कुणिज्जरयणं सुभत्तीए ॥437॥
कालायरु-णह-चंदह-कप्पूर सिल्हारसाइदव्वेहिं।
णिप्पणधूमवत्तीहिं परिमलय त्तियालीहिं ॥438॥
उग्गसिहादेसियसग्ग-मोक्खमग्गेहि बहलधूमेहिं।
धूविज्जजिणिंदपयारविंदजुयलं सुरिंदणुयं॥439॥

अर्थ-अपने प्रभासमूह से अमित (अगणित) सूर्यों के समान तेजवाले, अथवा अपने प्रभा पुंज से सूर्य के तेज को भी तिरस्कृत या निराकृत करने वाले, धूम रहित, तथा धीरे-धीरे चलती हुई मन्द वायु के वश नाचती हुई शिखाओं वाले और मेघ-पटल रूप कर्म समूह के समान दूर भगाया है अन्धकार को जिन्होंने ऐसे दीपकों से परमभक्ति के साथ जिन-चरण कमलों के आगे पूजन की रचना करें, अर्थात् दीप से पूजन करें॥ 436-437॥

कालागुरु, अम्बर, चन्द्रक, कर्पूर, शिलारस (शिलाजीत) आदि सुगंधित द्रव्यों से बनी हुई, सुगन्ध से लुब्ध होकर भ्रमर आ रहे हैं, तथा जिसकी ऊँची शिखा मानो स्वर्ग और मोक्ष का मार्ग ही दिखा रही हैं और जिसमें से बहुत सा धुँआ निकल रहा है, ऐसी धूप की बत्तियों से देवेन्द्रों से पूजित श्री जिनेन्द्र के पादारबिन्द युगल को धूपित करें, अर्थात् उक्त प्रकार की धूप से पूजन करें॥ 438-439॥

4. श्रीदेवसेनविरचित प्राकृत भावसंग्रह गाथा 126,127 पेज नं. 451 पर लिखा है:

कप्पूरतलपयलियमंदमरुपहयणडियदीवेहिं ।
पुज्जइ जिणपयपोमं ससिसूर विसमतणुंलहई ॥126॥
सिल्ला रसअयरुमीसियणिग्गयधूवेहिं बहलधूमेहिं।
धूवइ जो जिणचरणेसु लहइ सुहवत्तणं तिजए॥ 127॥

अर्थ- जो मन्द-मन्द पवन झकोरों से नृत्य करते हुए, कर्पूर और घृत-तैल से प्रज्वलित दीपकों से जिनदेव के चरण कमलों की पूजा करता है वह चन्द्र और सूर्य के समान प्रकाशमान शरीर को प्राप्त करता है॥ 126॥ जिसमें से प्रचुर धूम्र निकल रहा है ऐसे शिलारस (शिलाजीत) अगुरु आदि द्रव्यों से मिश्रित धूप से जिनेन्द्र देव के चरणों को सुगन्धित करता है वह तीन लोक में परम सौभाग्य को प्राप्त करता है। ॥ 127॥

5. श्री कविवर किशनसिंह विरचित क्रियाकोष में गाथा 1446, पृष्ठ 228 पर इस प्रकार लिखा है:-

अपराह्न भविकजन करिह एव, दीपहि चढ़ाय बहु धूप खेव।
इहि विधि पूजा करि तीन काल, शुभ कंठ उचारिय जयह माल ॥1446॥

अर्थ- अपराह्न काल में दीपक चढ़ाकर तथा धूप खेकर पूजा करें। इस प्रकार तीनों समय पूजा कर कण्ठ से जयमाला का उच्चारण करें ॥1446॥

6. श्री धवल पु. 8/3 में लिखा है "चरु बलि-पुप्फ-फल-गंध धूव दीवादीहि सगभत्ति पगासो अच्चणा णाम=चरु, बलि, पुष्प, फल, गन्ध, धूप और दीप आदिकों से अपनी भक्ति प्रकाशित करने का नाम अर्चना है।

उपर्युक्त प्रमाणों से यह स्पष्ट है कि जैन शास्त्रों में दीप जलाने और धूप खेने के प्रचुर प्रमाण हैं। इतना अवश्य है कि हमें विवेक सहित ये कार्य करने चाहिए। अर्थात् धूप अथवा दीपक या घी, बाजार से खरीदा हुआ न होकर मर्यादित होना चाहिए। आरती करने का समय सूर्यास्त के लगभग का है। रात्रि में आरती नहीं करनी चाहिए। दीप में घी भी इतना ही लेना चाहिए जो आरती होने तक के लिए पर्याप्त हो।

जैन प्रत्याशियों का लोक सेवा अयोग द्वारा चयन

विगत दिनों संघ लोक सेवा आयोग के द्वारा सिविल सर्विसेज (मेन) एक्ज़ामिनेशन 2001 का फाइनल रिजल्ट घोषित किया गया था।

जैन समाज के लिए यह गौरव का विषय है कि सामान्य वर्ग से चयनित लोगों में से 6 प्रतियोगी वे भी चयनित हुए हैं, जिनके नाम जैन के रूप में लिखा/पहचाना जा सका है। संभव है इनके अतिरिक्त भी अन्य भी प्रतियोगी जैन हों, जिन्हें उपनाम के कारण पहचाना नहीं जा सका। चयनित जैन प्रतियोगियों के नाम, उनकी रेंक के साथ निम्न प्रकार हैं-

1. अभिषेक जैन-3, 2. सौरभ जेन-29, 3. संजय कुमार जैन-37, 4. एकता जैन-110, 5. वैभव बजाज-198 एवं 6. ने जैन-202।

इनके अतिरिक्त कुछ चयनित प्रतियोगी ऐसे भी हैं जिनके नाम के साथ अग्रवाल जातीय होने से अग्रवाल अथवा अग्रवाल जातीय गोत्र-मित्तल, जिंदल, गर्ग, बंसल या गोयल उपनाम जुड़ा है तो किसी के नाम के साथ पुंगलिया,शाह, चौधरी, नायक, लोहिया, कौशल, पाटिल, मोदी, सेठी, लाखावत एवं कोठारी आदि उपनाम युक्त लिखा होने से लगभग 20-25 प्रतियोगियों के जैन होने की आंशिक संभावना भी है, क्योंकि इनमें से कुछ उपनाम जैन कुलों में भी लिखे जाते हैं। उक्त छह में से प्रथम दो का चयन आई.ए.एस. पद के लिये होगा, ऐसा सुनिश्चित है।

जिन-भाषित परिवार एवं पाठकगणों की ओर से चयनित प्रत्याशियों को उनकी सफलता के लिए साधुवाद।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शेषांश

बारह भावना

श्री मंगतराय जी

एकत्व भावना

जन्मे मरे अकेला चेतन सुख-दुख का भोगी।
और किसी का क्या इक दिन यह देह जुदा होगी॥
कमला चलत न पैंड मरघट तक परिवारा।
अपने-अपने सुख को रोवे पिता-पुत्र-दारा ॥ 10॥

अर्थ - यह आत्मा जन्म एवं मरण अकेला ही करता है, सुख-दुख को भोगने वाला भी अकेला है। अन्य पदार्थ क्या, यह शरीर भी आयु पूर्ण होने पर यहीं छूट जावेगा। उस समय पत्नी भी 'देहली' (चौखट) तक ही आवेगी उससे बाहर न निकलेगी, परिवार के लोग श्मशान घाट तक ही जावेंगे एवं माता-पिता व स्त्री जो विलाप कर रहे हैं वे सब स्वार्थ-अपने सुख के खातिर रो रहे हैं।

ज्यों मेले में पंथीजन मिल नेह फिरें धरते ।
ज्यों तरवर पै रैन बसेरा पंछी आ करते ॥
कोस कोई दो कोस कोई उड़ फिर थक-थक हारे।
जाय अकेला हंस संग में कोई न पर मारे ॥ 11॥

अर्थ : जैसे मेले में राहगीर / मित्रादि लोग मिल जाते हैं एवं स्नेह से यहाँ से वहाँ घूमते रहते हैं और जैसे रात्रि में वृक्ष पर पक्षी आकर निवास कर लेते हैं फिर उड़कर कोई एक कोस, कोई दो कोस तक जाते हैं फिर थक-थक कर कहीं निवास करने लग जाते हैं, वैसे ही यह जो हमारे परिवार के लोग हैं, आज एक साथ हैं, आयु पूरी होते ही हम मरण को प्राप्त हो जावेंगे और अकेली आत्मा अन्य पर्याय में उत्पन्न हो जावेगी, कोई किसी के साथ जन्म या मरण नहीं करता है!

अन्यत्व भावना

मोह रूप मृग तृष्णा जग में मिथ्या जल चमकै।
मृग चेतन नित भ्रम में उठ-उठ दौड़े थक थक कै॥
जल नहिं पावै प्राण गमावै भटक-भटक मरता ।
वस्तु पराई माने अपनी भेद नहीं करता ॥ 12 ॥

अर्थ : जिस प्रकार रेगिस्तान में, बालू की चमक को पानी मानकर, प्यासा हिरन, दौड़-दौड़ कर, पानी न मिलने से, थक कर मरण को प्राप्त हो जाता है, उसी तरह यह संसारी जीव भी, मोह एवं मिथ्यात्व के कारण, अन्य वस्तु को अपनी मानता हुआ तथा निज और पर से भेद को नहीं जानता हुआ सुख के अभाव में, भ्रमण करता रहता है।

तू चेतन अरु देह अचेतन, यह जड़ तू ज्ञानी ।
मिले अनादि यतन सों, बिछुड़ै,ज्यों पय अरु पानी।
रूप तुम्हारा, सबसे न्यारा, भेद ज्ञान करना।
जौ लों पौरुष थके न तौ लों, उद्यम सों चरना ॥ 13 ॥

अर्थ : मैं चेतन हूँ, मैं ज्ञानी हूँ, यह शरीर अचेतन है, पौद्गलिक है। ये शरीर और आत्मा अनादिकाल से मिले हुए हैं, परन्तु पुरुषार्थ करने पर अलग-अलग होते हैं जैसे दूध और पानी गर्म करने पर अलग-अलग हो जाते हैं। हे आत्मन्! तुम्हारा रूप तो अन्य सब द्रव्यों से अलग है। तुम निरंतर भेद ज्ञान करो तथा जब तक शरीर में शक्ति है तब तक चारित्र में सदैव उद्यम करो।

अशुचि भावना

तू नित पौखे यह सूखे ज्यों धोवै त्यों मैली ।
निश दिन करे उपाय देह का रोग दशा फैली॥
मात-पिता रज वीरज मिलकर बनी देह तेरी।
मांस हाड़ नश लहू राधकी प्रगट व्याधि घेरी ॥ 14॥

अर्थ : हे आत्मन्! तू अपने शरीर को प्रतिदिन पुष्ट करता है, परन्तु फिर भी यह सूखता जा रहा है। जैसे ही इसे धोता है वैसे ही यह मैला हो जाता है। दिन-रात शरीर को स्वस्थ रखने का उपाय करता है परन्तु फिर भी यह रोगी बना रहता है। माता के रज और पिता के वीर्य के मिलने से यह तेरी देह बनी है। यह मांस, हाड़, नश, रक्त व पीप आदि कुधातुओं से भरी हुई है एवं प्रत्यक्ष में ही रोगों से व्याप्त रहती है।

काना पौड़ा पड़ा हाथ यह चूसै तो रोवे ।
फलै अनंत जु धर्म ध्यान की भूमि विषै बोवै॥
केसर चंदन पुष्प सुगंधित वस्तु देख सारी ।
देह परसते होय अपावन निशदिन मल जारी ॥15॥

शब्दार्थ : कानापौड़ा=गन्ने की पोर जो बोने पर उगती है (सुखा गन्ना), पड़ा= मिला, परसते = स्पर्श से, मलजारी= मल बहता रहता है।

अर्थ - यदि काना गन्ना प्राप्त हो जावे और उसे चूसें तो दाँतों में दर्द होने से रोना आ जावेगा परन्तु उससे फल कुछ भी प्राप्त नहीं होगा। और यदि उसे जमीन में बो देंगे तो बहुत से मीठे गन्ने प्राप्त हो जावेंगे। उसी प्रकार इस शरीर को यदि धर्मध्यान रूपी भूमि में बो देंगे तो अनंत फल रूप अनंत चतुष्टय प्राप्त हो जावेगा। ऐसा नहीं करेंगे तो संसार में ही रोते रहेंगे।

केशर, चंदन, पुष्प आदि जितनी भी सुगन्धित वस्तुएँ देखी जाती हैं, वे सब शरीर का स्पर्श करते ही अपवित्र हो जाती हैं। इस शरीर से दिन-रात नव द्वारों से मल झरता रहता है। इस प्रकार यह शरीर अत्यन्त अपवित्र है। इससे प्रीति न करके, इसे धर्म में लगाना चाहिये।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आस्त्रव भावना

ज्यों सरजल आवत मोरी त्यों आस्त्रव कर्मन को।
दर्वित जीव प्रदेश गहै जब पुद्गल भरमन को॥
भावित आस्त्रव भाव शुभाशुभ निशदिन चेतन को।
पाप पुण्य ये दोनों करता कारण बंधन को ॥ 16॥

शब्दार्थ : सर= सरोवर, आवत= आता है, मोरी=नाली, दर्वित=योग सहित, गहै=ग्रहण करता है।

अर्थ : जिस प्रकार नाली का पानी सरोवर में आता है इसी प्रकार आत्मा में कर्मों का आस्त्रव होता है। तीनों लोकों में भरी हुई पुद्गल वर्गणा (कार्मण वर्गणा) को, योग सहित आत्मा के प्रदेश ग्रहण करते हैं। यह द्रव्यास्त्रव है। प्रति समय (दिन-रात) आत्मा में होने वाले शुभाशुभ भावों के आधार पर भावास्त्रव होता है।

शुभ भावों से पुण्यास्त्रव और अशुभ भावों से पापास्त्रव होता है। ये पुण्य भाव एवं पाप भाव ही कर्मों का बंध कराने में भी कारण हैं।

पन मिथ्यात योग पंद्रह द्वादश अविरत जानो।
पंचरु बीस कषाय मिले सब सत्तावन मानो॥
मोह भाव की ममता टारै पर परणत खोते।
करे मोखका यतन निरास्त्रव ज्ञानी जन होते ॥17॥

शब्दार्थ : पन=पाँच, खोते=दूर करने से।

अर्थ : पाँच मिथ्यात्व (एकान्त, विपरीत, विनय, संशय, अज्ञान) योग पन्द्रह, अविरति बारह और कषाय पच्चीस, से सब मिलकर आस्त्रव के 57 भेद हो जाते हैं। रागद्वेष आदि ममत्व-अहंकार को दूर करके,पर परणति से भी दूर रहने वाले मोक्ष पुरुषार्थ में समर्थ ज्ञानी जन ही आस्त्रव से रहित होते हैं।

संवर भावना

ज्यों मोरी में डाट लगावै तब जल रुक जाता।
त्यों आस्त्रव को रोकै संवर क्यों नहिं मन लाता॥
पंच महाव्रत समिति गुप्ति कर वचन काय मन को।
दशविध धर्म परीषह बाइस बारह भावन को ॥18॥

शब्दार्थ : डाट = ढक्कन।

अर्थ : जिस प्रकार नाली में ढक्कन लगा देने से आता हुआ जल रुक जाता है, उसी प्रकार आस्त्रव अर्थात् आते हुए कर्मों को रोकने में संवर कारण है। ऐसे संवर को प्राप्त करना चाहिये। पाँच महाव्रत, पाँच समिति, तीन गुप्ति, दस धर्म, बाईस परीषह एवं बारह भावना ये आस्त्रव के रोकने में अर्थात् संवर में कारण हैं।

यह सब भाव सतावन मिलकर आस्त्रव को खोते।
सुपन दशा से जागो चेतन कहाँ पड़े सोते ।।
भाव शुभाशुभ रहित शुद्ध भावन संवर पावै।
डॉट लगत यह नाव पड़ी मझधार पार जावै ॥ 19॥

शब्दार्थ : धोते= दूर करते, मंझधार = बीच समुद्र में।

अर्थ : उपर्युक्त कहे गये 57 भाव आस्त्रव को दूर करते हैं। हे चेतात्मा! तुम स्वप्न अवस्था से जाग जाओ, कहाँ पड़े हो, कहाँ मोह रूपी निद्रा में सो रहे हो!

जिस प्रकार डॉट लगाने से बीच समुद्र में पड़ी नाव किनारे तक पहुँच जाती है, उसी प्रकार शुभ और अशुभ भावों से रहित शुद्ध भावना रूप संवर की भावना से, जीव संसार रूपी समुद्र से पार हो जाता है।

अर्थकर्त्ता- ब्र. महेश जैन
श्रमण संस्कृति संस्थान,
सांगानेर (जयपुर)

जीवन है बादल की बूँद

लालचन्द्र जैन 'राकेश' गंजबसौदा

जीवन है बादल की बूँद, कब गिर जाये रे।
होनी-अनहोनी जाने कब घट जाये रे ॥

●

खेल-खल में बीता बचपन, विषयन अंध जवानी।
जर्जर देह बुढ़ापा आया, हो गइ ख़त्म कहानी॥
जीवन है सांसों की हाट, कब उठ जारे रे । जीवन है... ॥

●

जीवन का घट रीत रहा है, ज्यों अंजलि का पानी।
जानबूझकर अंध बने हैं, अच्छे-अच्छे ज्ञानी ॥
बर्फ डली सम छोटा जीवन, कब घुल जाये रे। जीवन है... ॥

●

चेतन राजा खींच रहे हैं, तन की टूटी गाड़ी।
आयु का ईंधन जब चुक जाये, रुक जाती है नाड़ी॥
जीवन है सांसों की रेल, कब रुक जाये रे ॥ जीवन है... ॥

●

इस जीवन के इन्द्रधनुष की, शोभा अतिशय-न्यारी।
किन्तु स्वप्न के राजपाट ज्यों, विनसत लगै न बारी॥
जीवन है बादल की बूँद, कब गिर जाये रहे। जीवन है... ॥

●

एक पेड़ पर करने आये, पंछी रैन बसेरा।
वैसे मिल परिवार जनों ने, डाला घर में डेरा॥
जीवन है पथिकों का मेल, कब छूट जाये रे। जीवन है... ॥

●

रहे न जीवन कभी एक सा, सुख-दुख आँख मिचौनी।
कभी नहीं सोची थी ऐसी, हो जाती अनहोनी॥
जीवन है मेघों की छाँव, कब छँट जाये रे। जीवन है... ॥

सम्पर्क सूत्र - नेहरु चौक, गली नं. 4, गंजबसौदा (विदिशा)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

व्यक्ति और कृति

साठ वर्ष के 'सरल' में छः वर्ष की सरलता समाई

डॉ. आनंद जैन

देश के आठ महान सन्तों की जीवन-गाथा लिखते हुए आठ विशेष ग्रन्थों की रूपरेखा तैयार कर देने वाले श्री सुरेश सरल एकमात्र साहित्यकार हैं जो सन् 84 से अब तक केवल सन्तों-साध्वियों और अध्यात्म पर कलम चला रहे हैं और देश के साहित्य संसार से सर्वथा नवीन एवं मौलिक सूत्रों पर समाहित साहित्य का भंडारण कर रहे हैं।

यों स्व. पं. हरिशंकर परसाई जी से प्रभावित होकर श्री सरल ने वर्ष 70 से 84 तक देश के पत्र-पत्रिकाओं में सार्थक व्यंग्य-लेख, व्यंग्य-कविता और व्यंग्य-कथाओं का क्रमबद्ध लेखन किया था, उसी अवधि में व्यंग्य को लेकर उनकी दो पुस्तकें भी पाठकों के समक्ष आई थीं।

फिर सन् 84 से आचार्य विद्यासागर का सान्निध्य प्राप्त कर लेने के बाद, सरल जी के प्रौढ़-मन और परिपक्व लेखनी ने केवल सन्त-विषय को स्पर्श किया और अपनी जीवन 'कथा-शिल्प' के सहारे सबसे पहले आचार्य विद्यासागर, फिर मुनि सुधासागर और उसके बाद आचार्य विरागसागर की जीवनी लिखी। क्रम ऐसा बना कि फिर शांत न बैठ सके और देखते-ही-देखते अर्ध-दशक में स्व. आचार्य ज्ञानसागर, स्व. आचार्य विमलसागरजी, उपाध्याय गुप्तिसागरजी, उपाध्याय ज्ञानसागरजी एवं मुनिरत्न तरुणसागरजी के चरित्र लिखे। 'सन्त-चरित' लिखते समय वे उसमें अपने स्वाध्याय की पूर्ति भी कर लेते हैं। क्योंकि उनकी कलम भक्ति के धरातल पर चलती है। कठिनाइयों को स्वेच्छा से अंगीकार कर अपने सुख-साखों को तिलांजलि दे सरलजी नित्य लेखन कर्म की तपाग्नि से गुजरते हैं और जाप की तरह अनिवार्य लेखन को नित नये आयाम प्रदान करते हैं।

अब तक अठारह प्रकाशित कृतियाँ और पाँच अप्रकाशित ग्रन्थ, साहित्य-जगत की झोली में, उनकी कलम के अवदान के रूप में स्थान पा चुके है। लगभग सत्रह वर्षों से श्री सरल किसी भी स्पर्द्धा, प्रतियोगिता, मंचबाजी, गोष्ठीबाजी और संस्थाबाजी से दूर, किन्तु सबके प्रति निर्मल-भावनाएँ लेकर-चलनेवाले, समय के एकमात्र व्यस्त लेखक हैं, जो प्रतिदिन दो-तीन घंटे का समय लेखन-संशोधन को प्रदान करके ही चैन अनुभूत करते हैं। मुंशी प्रेमचंद की लेखनी की सरलता और जैनेन्द्र कुमार की दार्शनिकता सरलजी की लेखनी का स्वभाव बन चुके हैं। वे स्व. डॉ. धर्मवीर भारती, स्व. कविवर वीरेन्द्र जैन और वरिष्ठ मनीषी स्व. डॉ. नेमीचंद जैन से भी कम प्रभावित नहीं हुए हैं।

देश के बड़े मंच और बड़ी से बड़ी पत्रिका के स्नेह प्राप्त कर लेने वाले सरल, अत्यन्त सुलझे हुए साहित्यकार हैं और सरलता को प्रथम धर्म-गुण मानते हैं।

भारतीय क्रांति दिवस, 9 अगस्त 1942 को संस्कारधानी में जन्मे सरल 9 अगस्त 2002 को 60 वर्ष के हो रहे हैं। कहें उन्हें जीवन-ग्रन्थ के 60 पृष्ठ बाँच लेने का अनुभव प्राप्त है। उनकी लेखनी से "सर्व-हिताय" के स्वर अधिक मिलते हैं, वे साहित्य को जिस ऊँचाई से लिखते हैं, जीवन को उसी ऊँचाई से जीते हैं, सादगी और उदारता उनके अलंकरण हैं, परोपकार व्रत।

देश के अनेक नगरों के जैन समाज द्वारा समय-समय पर उनके सार्वजनिक अभिनंदन किये गये हैं, उसी शृंखला में गत वर्ष खण्डेला (राजस्थान) समाज से उन्हें उनके लेखन पर 'स्वर्णाभिनंदन-पत्र' और इकतीस हजार रु. की राशि से अभिनंदित किया जा चुका है।

उनकी अनेक सच्चाइयाँ समय के शिलालेखों पर स्वर्णाक्षरों से लिखी जा सकेंगी कि वे साहित्य और जीवन में सरलता का रंग भर रहे हैं, कि वे अपने साहित्य को औदार्य और निस्वार्थता का वह धरातल दे रहे हैं जो आनेवाली पीढ़ियों को प्रकाश स्तम्भ का कार्य करेगा, कि वे सरल हों या कठिन परन्तु सन्त-जीवनी की सुगन्धों से आप्लुत हैं, कि वे सन्त-साहित्य और सन्त-स्वभाव के जौहरी हैं, कि वे मौन और एकान्त स्थल को सजाने वाले साधक-पुरुष हैं, कि स्वेच्छा से जीवन को तप में निरत करने वाले विषपायी हैं, कि वे साठ वर्ष के हैं पर उनमें छः वर्ष की सरलता समाई हुई है। उनके विषय में मनीषी मुनिपुंगव श्री सुधासागर जी महाराज ने लिखा है-"सरल वर्तमान दौर के अति विशिष्ट कथाकार हैं, वे भले ही सरल हों परंतु पुरस्कार उन्हें भारी लेखकीय-श्रम कर लेने के बाद मिले हैं। मौलिक साहित्य की सर्जना में निरंतरता बनाये रखने में कृतसंकल्पित श्री सरल को सिद्ध-हस्त-लेखकों की राष्ट्रीय-सूची में श्रेष्ठ स्थान प्राप्त है"

दस वर्ष तक मंच संचालन का सुनहरा इतिहास घड़ने वाले सरल जी की कथा या कहानी-लेखन में जितनी स्वस्थ पकड़ है, उतनी ही लेख और व्यंग्य शिल्पन में है, कविता तो उनके मानस में ही रमी हुई है। उनकी विशेष पंक्ति-"जिसे चार दाने मिल जाते, भूल बैठता वह उड़ान है।"

जैन-त्यागीगण बतलाते हैं कि जैन परम्परा की दृष्टि से श्री सरल के उक्त आठ ग्रन्थों ने श्रुत-संवर्द्धन में महान सहयोग किया है। आज बड़े-से-बड़े विद्वान केवल प्राचीन ग्रंथों की टीकाएँ लिखकर अपनी भूमिका की इति समझ लेते हैं, तब सरल जी दिगम्बर संतों के चरित पर लेखनी चला कर अपना अजर-अमर कर रहे हैं। गत सौ वर्षों में कितने आचार्य हुए, कम ही लोग जानते हैं, किन्तु आचार्य शांतिसागरजी को सभी जानते हैं, क्योंकि उनका जीवनवृत्त पं. दिवाकर जी द्वारा लिखा गया था। एक मायने में श्री सरल जी दिवाकरजी द्वारा प्रज्ज्वलित किये गये दीप को अपनी लेखनी से और-और तेजवान कर रहे हैं। नूतन दीप बाल कर धर रहे हैं, एक सुन्दर दीपावली घड़ रहे हैं, वह भी आधुनिक भाषा में और अत्याधुनिक शैली में।

69, गल्ला बाजार रोड, सागर (म.प्र.)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्राकृतिक-चिकित्सा

अनिद्रा का प्राकृतिक उपचार

डॉ. वन्दना जैन

आज की तेज रफ्तार जिंदगी में बिना बुलाया मेहमान रोग है अनिद्रा। आज से कुछ समय पहले मनुष्य अपने नित्य कर्म में शारीरिक श्रम को ज्यादा महत्त्व देता था, स्त्रियाँ भी अपने घरेलू कार्य स्वयं करती थीं जिससे उनका शरीर सुगंठित रहता था, पर आज की भाग-दौड़ की जिन्दगी में मनुष्य को यह सोचने की फुर्सत नहीं कि वह क्या कर रहा। परिणाम, न खाने की सुध, न सोने की फिक्र, नींद गायब। जिस तरह हमारे शरीर के लिए भोजन आवश्यक है, वैसे ही पर्याप्त नींद भी आवश्यक है। स्वस्थ शरीर के लिए कम-से-कम 6 या 7 घंटे नींद आवश्यक है।

लक्षण

नींद नहीं आना, सिर का भारीपन, याददाश्त कमजोर हो जाना, चेहरे पर तनाव, वजन बढ़ना। मानसिक विक्षिप्तता, पागलपन। उच्च रक्त चाप, चक्कर आना, आँखों में जलन व भारीपन, मानसिक अस्थिरता, एकाग्रता की कमी, आलस्य, प्रमाद व काम में मन नहीं लगना। जम्हाई आना आदि।

कारण

कब्ज, हार्मोन्स का अस्थिर स्तर। बुखार, पेट के रोग। उच्च व निम्न रक्त चाप। गठिया/दमा/खाँसी, खुजली आदि शारीरिक रोग। स्नायु संबंधी विकार। मद्यपान, धूम्रपान, कॉफी, चाय, चॉकलेट, टॉफी आदि कैफीन युक्त आहार। अधिक मानसिक परिश्रम, उद्वेग, चिंता। नकारात्मक विचार, हमेशा ख्याली सपने बुनना। ज्यादा रात तक जागने के कारण भी जैविक घड़ी (सरकेडियन बायोलॉजिकल क्लॉक) या रिद्म अस्त-व्यस्त हो जाता है। अधिक खाना/खाते ही सो जाना/ कम खाना, उपवास/शोर टी.वी., फिल्म आदि का व्यसन आदि अनेक कारण हैं। व्यायाम की कमी/भयग्रस्त होना/तामसिक भोजन।

निदान

प्रात: जल्दी उठने का प्रयास करें व नित्य कर्मों से निवृत्त होकर मार्निंग वॉक (प्रात: भ्रमण) की आदत डालें।

थोड़ी एक्सरसाइज शरीर को तनाव मुक्त तो करती ही है। साथ ही इससे शरीर की अकड़न भी दूर होती है।

शवासन/शिथलीकरण व योग निद्रा का अभ्यास करें। शरीर को ढीला करके शांत व शिथिल छोड़ दें। प्रत्येक अंग का सूक्ष्मता से निरीक्षण करें। एक-एक अंग को शिथिल होकर सो जावें तथा नींद की स्वकल्प भावना से नींद आने लगती है।

नित्य सुबह व रात को बिस्तर पर लेटे हुए दीर्घ श्वसन प्राणायाम का प्रयोग करें (मन में गिनते हुए 8(सेकेण्ड) तक श्वांस भरें, 9-10 सेकण्ड रोकें, पुन: 8 सेकण्ड तक निकालें, 9-10 तक बाहर रोकें अथवा 8 (सेकण्ड) श्वांस भरें 16 तक निकालें। उपरोक्त प्रयोग 50 से 100 बार करें।)

सामान्य अवस्था में भी सोने के पूर्व हाथ पैर और सिर को धोकर पोंछ लें।

कपड़े ढीले, खिड़कियाँ व रोशनदान खुले हुए, बिस्तर आरामदेह, अंधेरा या अत्यल्प प्रकाश रखें।

कभी-कभी शास्त्रीय संगीत अथवा मनपसंद गीत सुनने मात्र से नींद आने लगती है। कुछ लोग पढ़ते-पढ़ते बोर होकर ऊँघने लगते हैं। नींद लाने के लिए श्रम आवश्यक है। भरपूर शारीरिक श्रम के बाद नींद अच्छी आती है।

नींद की गोली लेना सर्वाधिक खतरनाक साबित होता है। ये दवाइयाँ नशीली होती हैं, जो नींद का भ्रम पैदा करती हैं बाद में स्थायी अनिद्रा का कारण बन जाती हैं।

प्राकृतिक उपचार

1. प्रतिदिन ठंडे पानी का एनिमा लें।
2. तलबे, सिर, पेट तथा रीढ़ की तेल/सूर्यतप्त हरे और नीले रंग के तेल से मॉलिश प्रतिदिन करें।
3. ठंडा रीढ़ स्नान-प्रतिदिन सोने से पूर्व रीढ़ स्नान ले अथवा रीढ़ टब की व्यवस्था न होने पर रोएँदार तौलिए को ठंडे पानी में भिगोकर रीढ़ के बराबर पतली तह करके रीढ़ के नीचे 15-20 मिनिट रखकर सोयें।
4. पेट पर 2 मिनिट गर्म व ठंडा क्रम से ही एक ही समय सेंक 5 बार दें। गीली चादर लपेट दें।
5. सर्वांग मिट्टी लपेट सप्ताह में दो बार।
6. एक दिन के अंतराल पर गर्म पादस्नान दें।
7. सप्ताह में एक दिन वाष्पस्नान।
8. प्रतिदिन आँख तथा पेट पर ठंडी मिट्टी। सिर पर मिट्टी लेप।
9. सप्ताह में एक दिन सर्वांग तेल मॉलिश के बाद धूप स्नान।

आहार चिकित्सा

अनिद्रा के रोगी नाश्ते में फल, भीगा हुआ किशमिस, मुनक्का दूध तथा अंकुरित या भीगा अनाज लें। भोजन में चोकर-दार आटे की मोटी रोटी/दलिया, उबली सब्जी, सलाद, दही, अंकुरित या भीगे अनाज तथा छांछ दें। सलाद व सब्जियों में पालक, टमाटर, गाजर, लौकी, पत्तागोभी, टिण्डा दें। फलों में अंगूर, खजूर, सेव, केला, आम, अनन्नास, अमरूद आदि ज्यादा-से-ज्यादा फल दें।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अपराह्न सब्जी का सूप लें अथवा मौसम्बी/संतरे का जूस। सायंकालीन भोजन में दोपहर की तरह हलका लें।

सोने के पूर्व मीठे फल में खजूर, 5 किशमिश, 20 नग मुनक्का खायें, दूध पिएँ अथवा गुड़ खायें। दातून करें और गरम पाद स्नान (पैरों को गर्म पानी में डालकर) अथवा ठंडा रीढ़ स्नान लें। तथा दीर्घ श्वसन प्राणायाम करते हुए सो जाएँ। रात्रि में मीठे आहार की बहुलता से नींद अच्छी आती है।

निषेध

कॉफी, चाच, समोसे, मिर्च (मैदे से बने पदार्थ), गरम मसाले, उत्तेजक पदार्थ। मांसाहार/धूम्रपान व मद्यपान तथा रात्रि जागरण कृत्रिम प्रकाश व देर तक जागने से हमारी पीनियल ग्रंथि तथा सर केडियन क्लॉक अस्त-व्यस्त हो जाती है। नींद लाने वाली प्रक्रियाएँ बेलय एवं अराजक हो जाती हैं। जहाँ कृत्रिम प्रकाश व विद्युत नहीं है, वहाँ के निवासी रात को भरपूर सोते हैं। सुबह ब्रह्ममुहूर्त में पक्षियों के संगीत एवं ताजगी के साथ उठ जाते हैं। जीवन का भरपूर आनंद लेते हैं।

जिस दिन से कृत्रिम चीजों का निर्माण हुआ उसी दिन से हमारी बॉयोलॉजिकल घड़ी अस्त-व्यस्त होने लगी। तनाव प्रतिस्पर्द्धा अनिद्रा के शिकार हो गये।

कुछ लोगों में खर्राटेदार नींद लेने की प्रवृत्ति होती है। उससे बचने के लिए सोने से पूर्व नाइट सूट की पीठ की बंद जेब में एक छोटी सी गेंद रख ली जाए तो गेंद के कारण पीठ के सीधे लेटने में बाधा होगी। नींद में भी करवट से लेटना अनिवार्य हो जाएगा। फलतः सीधे लेटने से उत्पन्न होने वाले खर्राटेदार नींद से मुक्ति मिल जाएगी।

योगोपचार

मानसिक तनाव प्रतिस्पर्धा से बचें, योग करें, शक्ति व वक्ष स्थल विकास/वृद्धि धृति एवं मेधा शक्ति विकासक क्रिया करें। पाद हस्तासन, ताड़ासन, जानुशीर्षासन, उर्द्धमयेन्द्रासन, वज्रासन, क्रमासन, उष्ट्रासन, पश्चिमोत्तानासन, पद्मासन, ज्ञान मुद्रा/त्रटिक व योगमुद्रा, चक्की चालन/आसन/धनुषासन/चक्रासन/शलभासन/ भुजंगासन/नौकासन/सर्वांगासन/मत्स्यासन तथा अंत में योग निद्रा करें। उज्जायी प्राणायाम तथा आनापान सती का ध्यान करें। अनिद्रा की स्थिति तुरंत दूर हो जाती है। सूर्यास्त के पूर्व खाना खायें, दोपहर के भोजन में प्रोटीन बहुत तथा शाम को कार्बोहाइड्रेट-बहुल आहार लें। नींद अच्छी आती है। अनिद्रा के कई रोगियों का सफल उपचार हमारे संस्थान भाग्योदय तीर्थ प्राकृतिक चिकित्सालय में किया गया है। पिछले वर्ष शाहगढ़ की एक महिला कई महीनों से सो नहीं पा रही थी। हमारे संस्थान में दूसरे दिन से ही गहरी निद्रा लेने लगी। 10 दिन के उपचार के बाद आज तक अनिद्रा की शिकायत से दूर है।

भाग्योदय तीर्थ,
प्राकृतिक चिकित्सालय, सागर (म.प्र.)

बिजौलिया (राज.) तीर्थक्षेत्र पर धर्मवर्षा

यहाँ श्री पार्श्वनाथ दि. जैन अतिशय क्षेत्र पर वर्षायोग हेतु प. पूज्य मुनि पुंगव श्रीसुधासागर जी महाराज, पू. क्षुल्लक श्री गंभीर सागर जी महाराज, पू. क्षुल्लक श्री धैर्यसागर जी महाराज एवं ब्र. संजय भैया के विराजित होने से अपूर्व धर्मवर्षा हो रही है। 4 अगस्त को रविवारीय प्रवचन के विशेष आयोजन में बुरहानपुर से पधारे हुये अ.भा.दि. जैन विद्वत् परिषद् के मंत्री एवं पार्श्व ज्योति के प्रधान सम्पादक डॉ. सुरेन्द्र 'भारती' का तीर्थक्षेत्र कमेटी की ओर से श्री घनश्याम जैन (विधायक) ने सम्मान किया। श्री कैलाशचन्द्र जैन सर्राफ (कोटा) ने पार्श्व ज्योति मासिक पत्रिका के जून-जुलाई अंक का विमोचन किया, जिसमें चाँदखेड़ी के विषय में यथार्थ जानकारी घूमता आईना शीर्षक के अन्तर्गत प्रकाशित की गई थी। सभा का संचालन श्री ऋषभ मोहीवाल (कोटा) ने किया। इस अवसर पर अपने उपदेशामृत में पू. मुनिपुंगव श्री सुधासागर जी ने कहा कि हम सबको पाप कार्यों से विरत होकर दान आदि के माध्यम से तीर्थक्षेत्रों का संरक्षण एवं वंदन कर पुण्यार्जन करना चाहिये। इस अवसर पर भोजन शाला का शिलान्यास महिला मंडल के तत्त्वावधान में किय गया।

डॉ. नामवर सिंह का संस्थान में व्याख्यान

विगत 2 अगस्त को देश के सुप्रसिद्ध साहित्यकार डॉ. नामवर सिंह द्वारा भारतवर्षीय दिगम्बर जैन प्रशासकीय प्रशिक्षण संस्थान मढ़िया जी जबलपुर में भावभीने स्वागत समरोह में अपने धन्यवाद भाषण में संस्थान के प्रशिक्षार्थियों को प्रेरक एवं मार्गदर्शक उद्बोधन देते हुए कहा कि ''पीढ़ियों के निर्माण हेतु समाज को आगे आना होगा और आज इस दिशा में तेजी से कार्य चल रहा है, संस्थान उसी चिन्तन की परिणति प्रतीत होता है। मैं संस्थान के स्वरूप को देखकर अभिभूत हुआ हूँ।'' आगे आपने प्रशिक्षार्थी गणों के पथ को प्रशस्त करते हुए अपने भाषण में कहा है कि नई पीढ़ी को जागरूक होकर जीना होगा। समय का सजगता के साथ उपयोग ही आपको निर्माण में सहायक हो सकता है।

संस्थान में आयोजित भावभीने स्वागत समारोह का संचालन एवं स्वागत भाषण संस्थान प्रधानमंत्री श्री नरेश गढ़ावाल द्वारा किया गया। आयोजन में सुप्रसिद्ध शिक्षाविद श्री हनुमान प्रसाद वर्मा, एवं प्रो. श्री मिश्र जी की उपस्थिति भी उल्लेखनीय थी।

संस्थान अध्यक्ष श्री गुलाबचंद जी दर्शनाचार्य द्वारा आभार ज्ञापित किया गया।

मुकेश सिंघई

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मध्यप्रदेश शासन का महत्त्वपूर्ण निर्णय

मध्यप्रदेश शासन के सामान्य प्रशासन विभाग, भोपाल (मध्यप्रदेश) के पत्र क्रमांक/एम.-19-31/1998/1/4 दिनाँक 30-3-99 के अनुसार शासन ने सत्ता के विकेन्द्रीकरण नीति के तहत जिला योजना समितियों को संस्थाओं के नामकरण करने के लिए अधिकार प्रत्यायोजित किए हैं।

शासन से प्राप्त अधिकार का उपयोग करते हुए जिला योजना समिति, शहडोल (मध्यप्रदेश) ने 24 मार्च एवं 22 अप्रैल 2002 की बैठकों में अनुमोदन करके ऐतिहासिक महत्त्व का निर्णय/अनुमोदन किया है। जिलाध्यक्ष, शहडोल (म.प्र.) के आदिवासी विकास विभाग के नाम पर जिला पंचायत शहडोल के मुख्य कार्यपालन अधिकारी के आदेश क्रमांक आ.वि./शि.स्था.03/फा.नं.032/2002/2979/शहडोल, दिनांक 21-5-2002 के अनुसार म.प्र. शासन से घोषित स्वतन्त्रता संग्राम सेनानियों की नामावली के आधार पर शहडोल जिले के 49 प्राथमिक एवं माध्यमिक विद्यालयों के नाम देश की स्वतन्त्रता में अविस्मरणीय योगदान देने वाले स्वतन्त्रता संग्राम सेनानियों के नाम पर परिवर्तित/घोषित किए हैं।

जैन समाज के लिए गौरवपूर्ण बात यह है कि जिन 49 सेनानियों के नाम पर नामकरण किए गए हैं उनमें 10 जैन स्वतन्त्रता सेनानी भी हैं। यह आदेश विकास खण्डों की दृष्टि में रखकर किया गया है। जिन दस सेनानियों के नाम पर विद्यालयों का नामकरण किया गया है, उनका विकास खण्ड के साथ निम्नानुसार नामकरण किया गया है-

क्र.	संस्था का नाम	विकास खण्ड	म.प्र. शासन से घोषित स्व. सं. से. के नाम पर नामकरण
1.	प्राथमिक पाठशाला कल्याणपुर	सोहागपुर	स्व. श्री रूपचन्द्र जैन प्राथमिक पाठशाला कल्याणपुर
2.	प्राथमिक कन्या पाठशाला लखेरनटोला	बुढ़ार	स्व.श्री धरमचन्द्र जैन प्राथ. कन्या पाठ. लखेरनटोला
3.	माध्यमिक शाला कोल्हुआ	बुढ़ार	स्व. श्री सुमतचन्द्र जैन माध्यमिक शाला कोल्हुआ
4.	प्राथमिक शाला फतेहपुर	सोहागपुर	स्व. श्री मुलायमचन्द्र जैन प्राथमिक शाला फतेहपुर
5.	प्राथमिक शाला चमरानटोला	बुढ़ार	स्व. श्री नानकचन्द्र जैन प्राथ. शाला चमरानटोला
6.	प्राथमिक शाला बटलीटोला	बुढ़ार	स्व.श्री रतनचन्द्र जैन प्राथ. शाला बटलीटोला
7.	प्राथमिक शाला पकरीटोला	बुढ़ार	स्व. श्री पन्नालाल जैन प्राथ. शाल पकरीटोला
8.	प्राथ. शाला बेसिक कोतमा	कोतमा	स्व. श्री हीरालाल जैन प्राथ. शाला बेसिक कोतमा
9.	माध्यमिक शाला धुरवार	सोहागपुर	स्व. श्री बाबूलाल जैन माध्यमिक शाला धुरवार
10.	प्राथमिक शाला कोलानटोला	सोहागपुर	श्री सागरचन्द्र जैन प्राथ. शाला कोलानटोला

म.प्र. शासन के निर्णय एवं शहडोल जिले के उक्त नामकरण परिवर्तन आदेश को लक्ष्य रखकर प्रदेश के अन्य जिलों तथा छत्तीसगढ़ प्रान्त का जैन समाज यदि प्रयास करे/कराए, तो उनके जिलों में भी अन्य स्वतन्त्रता संग्राम सेनानियों के साथ जैन स्वतन्त्रता संग्राम सेनानियों के नाम पर शासकीय भवनों, सार्वजनिक स्थलों एवं परियोजनाओं इत्यादि के नाम भी परिवर्तित किए/कराए जा सकते हैं। म.प्र.शासन के उक्त निर्णय के समान ही अन्य प्रान्तों की सरकारों से अपने-अपने प्रान्तों में ऐसा ही नियम बनाने या बने हुए नियम का अनुपालन कराने हेतु अनुरोध किया जा सकता है।

इष्टोपदेश के सुभाषित

वासनामात्रमेवैतत् सुखं दुःखं च देहिनाम्
तथा ह्युद्वेजयन्त्येते, भोगा रोगा इवापदि ॥

भावार्थ - संसारी प्राणियों को इन्द्रियों से प्राप्त सुख-दुःख कल्पना मात्र हैं, वास्तविक नहीं है, इसलिए ये भोग आपत्ति के समय रोगों की तरह आकुलता पैदा करते हैं।

मोहेन संवृतं ज्ञानं, स्वभावं लभते न हि।
मत्तः पुमान् पदार्थानां यथा मदनकोद्रवैः ॥

भावार्थ - मादक कोदों के खा लेने से जैसे मनुष्य पदार्थों को ठीक तरह से नहीं जान पाता, उसी प्रकार मोह से आच्छादित ज्ञान भी आत्मस्वभाव को नहीं जान पाता।

पं. सनतकुमार, विनोद कुमार जैन रजवाँस

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अखिल भारतवर्षीय दिगम्बर जैन विद्वत्परिषद् कार्यकारिणी समिति बैठक

वीरशासन जयन्ती- विद्वत परिषद् 58वाँ स्थापना दिवस सम्पन्न
जैन आर्काइब्ज एण्ड लायब्रेरी की गन्नौर में स्थापना

गन्नौर (सोनीपत) हरियाणा-यहाँ अखिल भारतवर्षीय दिगम्बर जैन विद्वत्परिषद् का 58वाँ स्थापना दिवस-वीरशासन जयन्ती समारोह प. पूज्य राष्ट्रसंत उपाध्याय श्री गुप्तिसागर जी महाराज एवं पंडिताचार्य श्री चारुकीर्ति भट्टारक स्वामीजी (मूड़बिद्री) के सान्निध्य में अपूर्व धर्म प्रभावना के साथ श्रीमान् डॉ. फूलचन्द्र जैन 'प्रेमी' (वाराणसी) की अध्यक्षता में दि. 25 जुलाई सन् 2002 को श्री गुप्तिसागर धाम सभागार, गन्नोर (हरियाणा) में मनाया गया, जिसमें डॉ. फूलचन्द्र जैन 'प्रेमी' (वाराणसी) डॉ. हुकु मचन्द्र पार्श्वनाथ संगवे (सोलापुर), डॉ. शीतलचन्द्र जैन (जयपुर), डॉ. सुपार्श्वकुमार जैन (बड़ौत), पं. निहालचन्द्र जैन (बीना), डॉ. नीलम जैन (गजियाबाद), सिद्धान्त रत्न विदुषी ब्र. बहिन सुमन जी, ब्र. बहिन रंजना जी, डॉ. सुरेशचन्द्र जैन (दिल्ली), डॉ. सनतकुमार जैन (जयपुर), डॉ. सुरेन्द्र कुमार जैन 'भारती' (बुरहानपुर), डॉ. उर्मिला जैन (बड़ौत), डॉ. शोभालाल जैन (जयपुर), श्री नरेन्द्रकुमार जैन (खरगौन), डॉ. सुभाषचन्द्र सचदेवा (सोनीपत) एवं श्रीमती शान्ता जैन (सोनीपत) ने वीरशासन जयन्ती एवं अ.भा.दि. जैन विद्वत्परिषद् के इतिहास एवम् कार्यों पर प्रकाश डाला।

इस अवसर पर आयोजित कार्यकारिणी समिति की बैठक में जो प्रस्ताव सर्वसम्मति से गहन विचार विमर्श पूर्वक पारित किए गए वे इस प्रकार हैं-

प्रस्ताव 1- तीर्थंकर भगवान् महावीर स्वामी की जन्मभूमि विदेह देशस्थ कुण्डलपुर ही है।

अ.भा. दि. जैन विद्वत्परिषद् की यह कार्यकारिणी समिति देवाधिदेव तीर्थंकर महावीर स्वामी की जन्मभूमि के विषय में उठे नए विवाद पर गहरी चिन्ता व्यक्त करती है तथा समाज से अपील करती है कि शास्त्रोक्त प्राचीन विदेहदेशस्थ कुण्डग्राम को ही तीर्थंकर महावीर की जन्मभूमि माना जाय।

प्रस्तावक-डॉ. रमेशचन्द्र जैन (बिजनौर)
समर्थक - डॉ. सुरेन्द्र जैन (दिल्ली)

प्रस्ताव 2- चाँदखेड़ी में हुई अपूर्व धर्मप्रभावना की अनुमोदना एवं दुष्प्रचार की निंदा।

अ.भा.दि. जैन विद्वत्परिषद् कार्यकारिणी समिति चाँदखेड़ी तीर्थक्षेत्र पर प.पू. मुनिपुंगव श्री सुधासागर जी महाराज द्वारा भूतल में विराजमान भगवान चन्द्र प्रभु, सिद्ध भगवान् एवं भगवान पार्श्वनाथ की प्रतिमाओं को दर्शनार्थ बाहर लाने से जो धर्मप्रभावना हुई है उसकी अनुमोदना करते हुए पूज्य मुनिश्री एवं संघ के प्रति हार्दिक कृतज्ञता ज्ञापित करती है। इस सम्बन्ध में विरोधियों द्वारा चाँदखेड़ी क्षेत्र के विषय में किए गए एवं किये जा रहे दुष्प्रचार की निन्दा करती है।

प्रस्तावक-प्राचार्य निहलाचंद जैन (बीना)
समर्थक- डॉ. हुकुमचंद पा. संगवे (सोलापुर)

प्रस्ताव 3- कृतज्ञता ज्ञापन

अखिल भारतवर्षीय जैन विद्वत्परिषद् की यह कार्यकारिणी समिति सर्वसम्मति से विद्वत्परिषद् का 58वाँ स्थापना दिवस समारोह आयोजित करने के लिए उपाध्याय श्री गुप्तिसागर धाम, गन्नौर (सोनीपत) हरियाणा के सभी पदाधिकारियों के प्रति हार्दिक कृतज्ञता व्यक्त करती है। उक्त आयोजन में सहयोग देने हेतु सिद्धान्तरत्न विदुषी ब्र. बहिन सुमन जी, विदुषी ब्र. बहिन रंजना जी एवं विदुषी डॉ. नीलम जैन (गाजियाबाद) के प्रति भी यह समिति हार्दिक कृतज्ञता व्यक्त करती है।

कार्यकारिणी बैठक के उपरान्त सभी सदस्यों के वर्षावास हेतु विराजित परमपूज्य संतशिरोमणि आचार्य श्री विद्यासागर जी महाराज के सुयोग्य शिष्य शाकाहार सवंर्धक परपपूज्य उपाध्याय श्री गुप्तिसागर जी महाराज के चरणों में श्रीफल अर्पित कर शुभाशीर्वाद प्राप्त किया तथा तीर्थंकर भगवान् महावीर जन्मभूमि, साहित्य प्रकाशन, विद्वानों की भूमिका विषयक विचार-विमर्श किया। इस अवसर पर समादरणीय पण्डिताचार्य भट्टारक स्वामी जी, मूड़विद्री से 'विद्वत्परिषद्' का संरक्षक बनने हेतु निवेदन किया गया तथा उनकी शुभकामनायें प्राप्त कीं।

इस अवसर पर उपाध्याय श्री गुप्तिसागर इन्स्टीट्यूट के अन्तर्गत गुप्तिसागर धाम, गन्नौर में जैन आर्काइव्ज एण्ड लाइब्रेरी की स्थापना पूज्य उपाध्याय श्री के मंगल आशीर्वाद एवम् सान्निध्य में मूड़विद्री-कर्नाटक से पधारे हुए समादरणीय पंडिताचार्य श्री चारुकीर्ति भट्टारक स्वामी जी के करकमलों द्वारा समागत विद्वानों, विदुषियों एवं उपस्थित जनसमुदाय के मध्य ज्ञान दीप प्रज्वलन के साथ की गई। उक्त लाइब्रेरी में परिषद् के अध्यक्ष डॉ. फूलचन्द्र जैन 'प्रेमी' ने प्रतीक स्वरूप अपनी शोधकृति 'मूलाचार एक समीक्षात्मक अध्ययन' विराजमान की तथा समिति की ओर से लगभग 500 धर्मशास्त्रों, शोधकृतियों आदि की स्थापना की गई। उक्त ग्रंथालय में विद्वानों के कृतित्व एवम् रचनात्मक लेखन में उपर्युक्त सामग्री के संजोने की व्यवस्था की गई है। कुछ ही समय बाद यह देश की महत्त्वपूर्ण लाइब्रेरी हो जायेगी।

प्रस्तुतकर्त्ता -डॉ. सुरेन्द्र कुमार जैन 'भारती'
मन्त्री-अ.भा.दि. जैन विद्वत परिषद्
एल-65, न्यू इंदिरा नगर, ए, बुरहानपुर म.प्र.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

साहित्य-समीक्षा

समीक्ष्य कृति का नाम - 'जन-जन के महावीर'

प्रकाशक - श्री दिगम्बर जैन धर्म प्रभावना समिति, नसियां जी, दादावाड़ी, कोटा (राज.)

प्रेरणा एवं आशीर्वाद -मुनिश्री सुधासागर जी महाराज, क्षुल्लक श्री गम्भीरसागर जी महाराज एवं क्षुल्लक श्री धैर्यसागर जी महाराज।

प्राप्ति स्थान- श्री ऋषभदेव दि. जैन ग्रन्थमाला, दि. जैन मन्दिर संघीजी, सांगानेर-जयपुर (राज.)।

समीक्ष्य कृति पूज्य क्षुल्लक श्री धैर्यसागर जी महराज (संघस्थ-परमपूज्य मुनिपुंगव सुधासागर जी महराज) की सूझ-बूझ एवं कुशल संयोजन/सम्पादन का सुपरिणाम है। भगवान् महावीर की 2600वीं जन्म जयन्ती वर्ष 2002 के शुभावसर पर प्रकाशित 'जन-जन के महावीर' लघुकाय कृति में ऐसा कुछ भी नहीं छूटा है जिससे जैनधर्म की प्राचीनता, इतिहास बोध, पुरातत्त्व, मूर्ति एवं वास्तुशिल्प, अधुनातन प्रेरक क्रियाकलपाप, विश्वमान्य विद्वानों के विचार और जैनधर्म तथा भगवान ऋषभदेव से लेकर भगवान महावीर के वैचारिक चिन्तन की उपादेयता सिद्ध होती हो।

प्रथम पृष्ठ (कवर) पर भारतीय संविधान की सुलिखित प्रथम कृति में अंकित 24वें तीर्थंकर भवान् महावीर का तप में लीन मुद्रा वाला चित्र, कवर-2 पर ब्रिटिश म्यूजिम, लन्दन में स्थित प्रथम तीर्थंकर ऋषभदेव एवं अन्तिम तीर्थंकर भगवान् महावीर का चित्र, कवर-3 पर देश-विदेश के डाक-विभाग से जारी किये गये जैन धर्म सम्बन्धी डाकटिकटों के चित्र एवं कवर-4, पर भारतीय डाक विभाग द्वारा भगवान् महावीर 2600वाँ जन्मकल्याणक सम्बन्धी विवरणिका प्रकाशित है, अत: कवर ही जैन धर्म की विशिष्टताओं को दर्शाने वाला बन गया है।

पूज्य क्षु. श्री धैर्यसागर जी महाराज ने कृति के प्राक्कथन में लिखा है कि -''इस संकलन के पीछे मेरा यही उद्देश्य था कि जनमानस को 2600वीं भ. महावीर जन्म जयन्ती पर ऐतिहासिक जानकारी उपलब्ध कराई जाए'' जिसमें वे सफल हुए हैं।

कुल 23 शीर्षकों में निबद्ध सामग्री यथार्थ के धरातल पर प्रमाणित की हुई है। महावीर कालीन भारत का नक्शा, सिन्धु घाटी की खुदाई से प्राप्त अजनाभ वर्ष (भारत) के प्रवर्तक महाराजा नाभिराय का चित्र, दुर्लभ सील, तीर्थंकर मूर्ति, समवशरण, विश्वशान्ति का विज्ञान, दुनिया के सबसे प्राचीनतम संवत्सर-वीर निर्वाण संवत् को दर्शानेवाला शिलालेख, जल में जीव राशि आदि चित्रों के चित्रांकन के साथ-साथ अभिप्रेत परिचायक सामग्री कुशलता से सँजोयी गयी है।

भारतीय स्वतंत्रता आन्दोलन के जैन शहीद, भगवान् महावीर और उनके अवदान पर देशी-विदेशी विद्वानों, संत महात्माओं के विचार इस तरह सँजोये गये हैं कि बहुलता खटकती नहीं, अपितु विविधता का आकर्षण बढ़ाती है।

कृति का प्रकाशन निर्दोष एवं नयनाभिराम है, जिसके लिए प्रकाशक बधाई के पात्रा हैं। इस कृति का अधिकाधिक प्रचार-प्रसार होना चाहिए, ताकि आम जन जैनत्व के प्रति यथार्थ जानकारी से अवगत हो सकें। यथार्थ के साथ आदर्श की ओर ले जाने वाली यह कृति जैनत्व की प्रतिष्ठा बढ़ाने वाली एवं जैनधर्म को जनधर्म बनाने की दिशा में उठाया गया सफल कदम है, जिसके लिए पूज्य क्षुल्लक श्री धैर्यसागर जी महाराज के प्रति कृतज्ञता का भाव सहज ही उत्पन्न होता है।

समीक्षक-डॉ. सुरेन्द्र कुमार जैन 'भारती'
मन्त्री-अ.भा.दि. जैन विद्वत् परिषद्
एल-65, न्यू इंदिरा नगर,ए, बुरहानपुर म.प्र.

पृष्ठ 32 का शेषांश

आपके नगर से प्रकाशित होने वाले समाचार-पत्र या पत्रिकाओं में अथवा उनसे संबंधित आपके नगर के पत्रकारों के माध्यम से उन्हें प्रेषित कराकर, नगर स्थित होर्डिंग्स पर लिखवा कर, पेम्पलेट्स-स्टीकर्स छपवाकर, सिटी केबल पर विज्ञप्ति कराकर, सिनेमा हॉल में स्लाइड्स बनवाकर, नगर में या आसपास के ग्रामों में पधारे जैन-वैदिक साधु-साध्वियों को जानकारी देकर, स्कूल-कॉलेजों में व्याख्यान कराकर एवं अपने परिचित-रिश्तेदारों तक प्रेषित कर, ग्राम-ग्राम तक इन चिह्नों का सही ज्ञान कराया जा सकता है,इससे जहाँ आम उपभोक्ता वर्ग इन मांसाहारी खाद्य पदार्थों या ऐलोपैथिक दवाओं का उपयोग करने से बच सकेगा, वहीं उत्पादकों के द्वारा चिह्न नहीं बनाए जाने या गलत स्थान/रंग से बनाए जाने पर प्रदेश, जिले या नगर के खाद्य एवं ओषधि निरीक्षकों, उपभोक्ता फ़ोरम आदि में शिकायत दर्ज कराके या एडव्होकेट के द्वारा उन उत्पादकों को चेतावनी या नोटिस दिए/दिलाए जा सकते हैं।

सागर (म.प्र.) के सांसद एवं संसद की स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय से संबंधित समिति के सदस्य श्री वीरेन्द्र कुमार द्वारा 5 जुलाई 2002 को 'वार्ता' न्यूज एजेन्सी के माध्यम से समाचार-पत्रों में विज्ञप्ति प्रचारित/प्रेषित करायी गयी है। नए केन्द्रीय स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्री श्री शत्रुघ्न सिन्हा के समक्ष समिति की बैठक में श्री वीरेन्द्र कुमार ने सुझाव रखा था कि शाकाहारी एवं मांसाहारी खाद्य पदार्थों पर हरे रंग या भूरे रंग से चिह्न बनाए जाने के बाबजूद, आम उपभोक्ता वर्ग इन चिह्नों से अभी परिचित नहीं हैं। अत: खाद्य पदार्थों के पैकेटों पर हिन्दी या अँग्रेजी में स्पष्ट रूप से शाकाहारी अथवा मांसाहारी खाद्य भी लिखा जाना अनिवार्य किया जाना चाहिए। विचार-विमर्श के उपरान्त श्री सिन्हा ने संबंधित अधिकारियों को तत्काल कार्यवाही हेतु निर्देश दिए हैं कि खाद्य पदार्थों के पैकेटों पर शाकाहारी अथवा मांसाहारी खाद्य लिखना अनिवार्य किया जाए।

सिद्धोदय सिद्धक्षेत्र, नेमावर से जनहितार्थ जारी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चिह्न देखकर मांसाहारी खाद्य पदार्थ खरीदने से बचें

जीव दया, क्रूरता निवारण, शाकाहार एवं प्राणीरक्षा में आस्था रखने वाली जनता, कार्यकर्ता एवं संस्थाओं के अथक प्रयासों से केन्द्रीय स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मन्त्रालय (105-ए, निर्माण भवन, नई दिल्ली) ने 'खाद्य अपमिश्रण निवारण अधिनियम, 1954' में संशोधन किए हैं। इन संशोधनों के पश्चात् अब 'मांसाहारी खाद्य एवं शाकाहारी खाद्य' पदार्थों के ऊपर एक निश्चित चिह्न बनाना अनिवार्य हो गया है। इसमें मांसाहारी खाद्य पदार्थ को परिभाषित करते हुए कहा है-''जिस खाद्य पदार्थ में एक संघटक के रूप में पक्षियों, ताजा जल अथवा समुद्री जीव-जन्तुओं अथवा अण्डों सहित कोई भी समग्र जीव-जन्तु या उसका कोई भाग अथवा जीव-जन्तु मूल का कोई उत्पाद अन्तर्विष्ट होगा, तो वह पदार्थ मांसाहारी खाद्य माना जाएगा। किन्तु इसके अन्तर्गत दूध या दूध से बने हुए पदार्थों को मांसाहारी खाद्य नहीं माना जाएगा।'' इस परिभाषा में अण्डों को भी मांसाहार में परिगणित कर लिया गया है।

खाद्य पदार्थ के मांसाहारी होने पर 'भूरे रंग' (ब्राउन कलर) वाला चिह्न ◉ बनाया जाएगा जो कि वृत्त के व्यास से दुगुने किनारी वाली भूरे रंग की बाह्य रेखा वाले वर्ग के भीतर भूरे रंग से भरा हुआ वृत्त बना होगा। जबकि शाकाहारी खाद्य होने पर वैसा ही प्रतीक चिह्न हरे रंग (ग्रीन कलर) से बनाया जाएगा। चिह्न की एक जैसी संरचना होते हुए भी भूरे रंग के कारण उस की मांसाहारी या शाकाहारी खाद्य पदार्थ होने की पहचान की जा सकेगी। इस चिह्न को मूल प्रदर्शन पैनल पर विषम पृष्ठभूमि वाले पैकेज पर, सभी प्रकार के प्रचार माध्यमों पर अब बनाना अनिवार्य किया गया है, जो कि उत्पादन के नाम या ब्राण्ड नाम के बिल्कुल नजदीक में प्रमुख रूप से प्रदर्शित किया जाना चाहिए। मांसाहारी खाद्य पदार्थों पर यह चिह्न बनाना 4 अक्टूबर 2001 से एवं शाकाहारी खाद्य पदार्थों पर 20 जून 2002 से अनिवार्य हो चुका है।

अनेक उत्पादकों ने अपने उत्पादों पर यह चिह्न बनाना प्रारंभ कर दिया है। यथा-'मांसाहारी खाद्य पदार्थों' में ब्रिटेनिया इंड. लि. नई दिल्ली के 'गुड डे' नामक फ्रूट केक, डोमिनोज़ पिज्जा मुम्बई के अनेक उत्पाद, फ्रीटो ले इण्डिया गुड़गाँव (हरियाणा) के चिकन फ्लेवर युक्त 'पोटेटो चिप्स' (आलू चिप्स), नेस्ले इं. लि. नई दिल्ली के 'मैगी-रिच चिकन सूप पाउडर' एवं मैगी-एक्स्ट्रा टेस्ट चिकन' आदि पर भूरे रंग से बना चिह्न देखने में आ रहा है। इतना ही नहीं, कुछ ऐलोपैथिक कैपस्यूल्स, टेबलेट्स एवं पाउडर्स के पैकेटों पर भी यह भूरे रंग का चिह्न बना हुआ पाया जा रहा है। यथा-यूनीवर्सल मेडिकेयर प्रा. लि. के उत्पाद 'फ्री फ्लेक्स', इस्टोवोन' एवं 'प्रिमोसा' कैपस्यूल्स, ईस्टर्न कैपस्यू प्रा. लि. दिल्ली के 'प्रोस्टोनिल' तथा 'मेगामोस्ट' 'कैपस्यूल्स, रेनबेक्सी लेबो. मुम्बई के 'रेवीटाल' कैपस्यूल्स, लूपिन लि. मुम्बई के 'रेकोविट' कैप, बर्त्रेर फार्मे ई. प्रा. लि. बैगंलौर के 'सेट काल मोम' टेबलेट्स, बेरगेन हेल्थकेअर मुम्बई के 'ओलेवोन' कैपस्यूल्स एवं नेस्ले कं. का नया नेस्ले सेरेलॅक शिशु आहार आदि। कुछ जानकार बतलाते हैं कि इन ऐलोपैथिक कैपस्यूल्स में प्राणिज स्रोत से प्राप्त (हड्डियों से निर्मित) जिलेटिन या प्राणिज स्रोत से प्राप्त विटामिन्स का प्रयोग किए जाने के कारण ही यह चिह्न बनाया जा रहा है। जबकि नोवार्टिज कन्जूमर हेल्थ इं. लि. मुम्बई के 'इम्पेक्ट' नामक पाउडर में फिश ऑईल के अतिरिक्त ऐसे ही कुछ अन्य विटामिन्स मिलाए जाते हैं।

20 जून 2002 से प्रभावशील शाकाहारी पदार्थों पर बनाए जाने वाले हरे चिह्न वाले नियम का कुछ उत्पादकों ने उससे पहले से ही अपने उत्पादों पर बनाना प्रारंभ कर दिया है। यथा-नेस्ट्ले इं. लि. नई दिल्ली के उत्पाद 'मैग्गी-2 मिनिट नूडल्स', पारले बिस्कुट प्रा. लि. मुम्बई के 'पारले मोनाको' तथा 'पारले जी' बिस्कुट एवं क्लासिक फूड्स मुम्बई के 'फन ब्रेक' नामक टॉमाटो बाल्स, लिप्टन कं. की ताजा चाय, प्रियागोल्ड कं. की किड्स क्रीम, बिस्कुट, के.आई.सी. फूड्स प्रा. लि. नई दिल्ली के 'मेक्स ऑरेंज' फ्रूट पावर इत्यादि पर हरा चिह्न बना हुआ पाया जाता है।

इन विभिन्न उत्पादों पर उपभोक्ता वर्ग को भ्रमित करने अथवा चिह्नों के वास्तविक ज्ञान/प्रयोजन की जानकारी नहीं होने का फायदा उठाकर कुछ उत्पादक भूरे रंग के स्थान पर लाल या भटा (मेजंटा) रंग से चिह्न बनाकर भ्रमित करने का प्रयास कर रहे हैं। कुछ ने उसे मूल प्रदर्शन पैनल पर नहीं बनाकर उत्पाद के पृष्ठ भाग पर बनाया है। इनके अतिरिक्त पापुलर बेकवेल, जबलपुर ने अपने उत्पाद 'पॉपुलर फ्रूट केक' में अण्डों का उपयोग करते हुए भी उस पर न तो भूरे रंग का यह चिह्न बनाया है और ना ही अपने उत्पाद के बनाने की तथा उसके उपयोग के अयोग्य (एक्सपायर) होने की तारीख ही दर्ज की है। इस प्रकार उपभोक्ता वर्ग के साथ सरासर धोखेबाजी की जा रही है।

आम उपभोक्ता को इन चिह्नों की जानकारी और उसके प्रयोजन के प्रचार करने की आज नितान्त आवश्यकता है। तभी व्यक्ति इन मांसाहारी उत्पादों की पहचान करके उनके उपयोग से बच सकता है। भारत सरकार के असाधारण राजपत्र में 4 अप्रैल 2001 में सा. का. नि. 245 (अ) नामक अधिसूचना 'मांसाहारी खाद्य पदार्थ' के सम्बन्ध में एवं 20 दिसम्बर 2001 को सा.का. नि. 908 (अ) नामक अधिसूचना 'शाकाहारी खाद्य पदार्थ' के संबंध में प्रकाशित हुई हैं। उनके आधार से प्रचारित की/करायी जा सकती हैं।

शेष पृष्ठ 31 पर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शाकाहारी खाद्य पदार्थों पर प्रदर्शित हरे रंग से बना चिह्न

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

रजि.नं. UP/HIN/29933/24/1/2001-TC

डाक पंजीयन क्र.-म.प्र./भोपाल /588/2002

मांसाहारी खाद्य पदार्थों एवं ऐलोपैथिक दवाओं पर प्रदर्शित भूरे रंग (ब्राउन कलर) से बना चिह्न

स्वामी, प्रकाशक एवं मुद्रक : रतनलाल बैनाड़ा द्वारा एकलव्य ऑफसेट सहकारी मुद्रणालय संस्था मर्यादित, जोन-I, महाराणा प्रताप नगर, भोपाल (म.प्र.) से मुद्रित एवं सर्वोदय जैन विद्यापीठ 1/205, प्रोफेसर्स कालोनी, आगरा - 282002 (उ.प्र.) से प्रकाशित।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org